जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2535

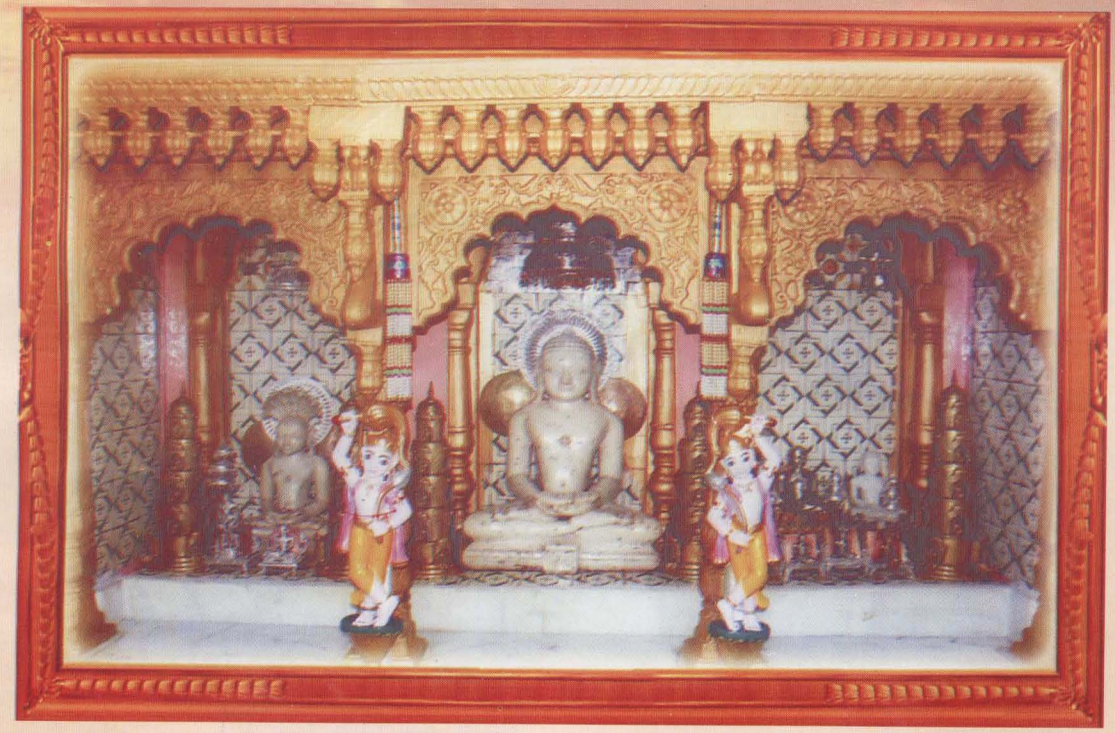

भगवान् आदिनाथ
श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र
काकागंज, सागर (म.प्र.)

मार्गशीर्ष, वि.सं. 2065

नवम्बर, 2008

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूल्य 15/-

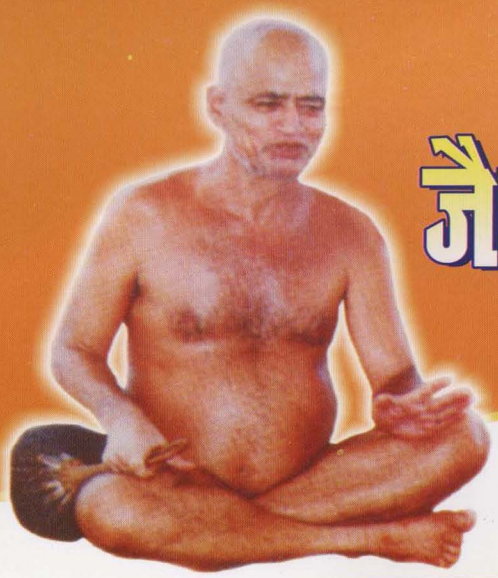

जैसी संगति वैसी मति

आचार्य श्री विद्यासागर जी

माँ धरती का बेटी मिट्टी को सम्बोधन

और यह भी देख!
कितना खुला विषय है कि
उजली-उजली जल की धारा
बादलों से झरती है
धरा-धूल में आ धूमिल हो
दल-दल में बदल जाती है।
वही धारा यदि
नीम की जड़ों में जा मिलती
कटुता में ढलती है,
सागर में जा गिरती
लवणाकर कहलाती है
वही धारा, बेटा!
विषधर मुख में जा
विष-हाला में ढलती है,
सागरीय शुक्तिका में गिरती,
यदि स्वाति का काल हो,
मुक्तिका बन कर
झिलमिलाती बेटा,
वही जलीय सत्ता---!

जैसी संगति मिलती है
वैसी मति होती है
मति जैसी अग्रिम गति
मिलती जाती-- मिलती जाती--
और यही हुआ है
युगों-युगों से
भवों-भवों से!
इसलिए, जीवन का
आस्था से वास्ता होने पर
रास्ता स्वयं शास्ता होकर
सम्बोधित करता साधक को
साथी बन साथ देता है।
आस्था के तारों पर ही
साधना की अंगुलियाँ
चलती हैं साधक की,
सार्थक जीवन में तब
स्वरातीत-सरगम झरती हैं!
समझी बात बेटा?

मूकमाटी (पृष्ठ ८-९) से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UPHIN/2006/16750

नवम्बर 2008 मासिक वर्ष 7, अङ्क 11

जिनभाषित

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, मदनगंज किशनगढ़
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282 002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2851428, 2852278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	1100 रु.
वार्षिक	150 रु.
एक प्रति	15 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ काव्य : जैसी संगति, वैसी मति आ.पृ. 2
: आचार्य श्री विद्यासागर जी

◆ मुनि श्री योगसागर जी की कविताएँ आ.पृ. 4

◆ मुनि श्री क्षमासागर जी की कविताएँ आ.पृ. 3

◆ **सम्पादकीय** : बारह तपों में स्वाध्याय सर्वश्रेष्ठ तप 2

◆ **लेख**

- षडावश्यक आज क्यों आवश्यक?
: मुनि श्री प्रणम्यसागर जी 5
- आदिकाल की याद दिलाती दीवाली 8
: उपाध्याय श्री निर्भयसागर जी
- सिद्धपरमेष्ठी का स्वरूप और उनकी महिमा 10
: पं० रतनलाल जी जैन, इन्दौर
- भवनत्रिक देव जिनभक्तों का सम्मान करते हैं या उपकार? : पं० सुनीलकुमार शास्त्री 14
- कर्म हमारे विधाता नहीं : सुमतचन्द्र दिवाकर 16
- शाकाहारियों को परोसा जा रहा है मांसाहार 19
: प्रेषक-निर्मलकुमार पाटोदी, इन्दौर

◆ **कविताएँ**

- कर्म मथानी में सपनों को : मनोज जैन 'मधुर' 4
- श्रमणपरम्परा में सम : सुमतचन्द्र दिवाकर 25

◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 21

◆ **ग्रन्थ समीक्षा** : दिगम्बर जैन मुनि 24

◆ **समाचार** 13, 18, 20, 23, 25, 26-32

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
'जिनभाषित' से सम्बन्धित समस्त विवादों के लिये न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

बारह तपों में स्वध्याय सर्वश्रेष्ठ तप

ईसा की प्रथम शताब्दी में रचित भगवती-आराधना में आचार्य शिवार्य ने कहा है-

बारसविहम्मि य तवे सब्भंतरबाहिरे कुसलदिट्ठे।
ण वि अत्थि ण वि य होहिदि सज्झायसमं तवो कम्मं॥ १०६॥

अनुवाद-"सर्वज्ञ द्वारा उपदिष्ट बारह प्रकार के बाह्य और अभ्यन्तर तपों में स्वध्याय के समान और कोई तप न है, न होगा।"

इसकी व्याख्या करते हुए अपराजित सूरि कहते हैं-"**कालत्रयेऽपि स्वाध्यायसदृशस्यान्यस्य तपसोऽभावः कथ्यते। अत्र चोद्यते-स्वाध्यायोऽपि तपो, अनशनाद्यपि तपो बुद्धेरविशेषात् कर्मतपन-सामर्थ्यस्याविशेषात्। किमुच्यते स्वाध्यायसदृशं तपो नेति? कर्मनिर्जराहेतुत्वातिशयापेक्षया सदृशमन्यत्तपो नैवास्तीत्यभिप्रायः।**" (विजयोदयाटीका / भगवती-आराधना / गा. १०६)।

अनुवाद-"उक्त गाथा में तीनों कालों में स्वाध्याय के समान अन्य तप का अभाव बतलाया गया है। यहाँ शंका उत्पन्न होती है- स्वाध्याय भी तप है और अनशनादि भी तप हैं। दोनों में कर्मों को तपाने की शक्ति समान है, तब ऐसा क्यों कहा गया कि स्वध्याय के समान कोई और तप नहीं है? इसका समाधान करते हुए आचार्य कहते हैं- सर्वाधिक कर्मनिर्जरा करने की अपेक्षा ऐसा कहा गया है। अर्थात् जितनी कर्मनिर्जरा स्वाध्याय से होती है, उतनी अन्य तप से नहीं होती।"

इस आशय की पुष्टि शिवार्य ने भगवती-आराधना की उत्तर गाथाओं से की है। उन गाथाओं में शिवार्य ने स्वाध्याय करनेवाले को **ज्ञानी** शब्द से और स्वाध्याय न करनेवाले को **अज्ञानी** शब्द से अभिहित किया है। इसीलिए टीकाकार अपराजितसूरि ने उन गाथाओं को निम्नलिखित प्रस्तावनावाक्य के साथ प्रस्तुत किया है-

"**प्रतिज्ञामात्रेण स्वाध्यायस्यान्यतपोभ्योऽतिशयितता न सिद्ध्यतीति मन्यमानं प्रति अतिशयसाधनायाह-**

जं अण्णाणी कम्मं खवेदि भवसयसहस्सकोडीहिं।
तं णाणी तिहिं गुत्तो खवेदि अंतो मुहुत्तेण॥ १०७॥
छट्ठट्ठमदसमदुबालसेहिं अण्णाणियस्स जा सोही।
तत्तो बहुगुणदरिया होज्ज दु जिमिदस्स णाणिस्स॥ १०८॥

अनुवाद-"जो मानता है कि कहने मात्र से यह सिद्ध नहीं होता कि स्वाध्याय अन्य तपों से श्रेष्ठ है अर्थात् अन्य तपों की अपेक्षा स्वाध्याय से अधिक निर्जरा होती है, उसे प्रमाण देने के लिए उत्तर गाथाएँ कहते हैं"-"अज्ञानी (स्वध्याय न करनेवाला) मनुष्य जिस कर्म को लाख-करोड़ भवों में नष्ट करता है, उसे त्रिगुप्तियुक्त ज्ञानी (स्वाध्यायरत) मनुष्य अन्तर्मुहूर्त में नष्ट कर देता है।" (१०७)।

"अज्ञानी (स्वाध्याय-विमुख) मनुष्य में दो, तीन, चार, पाँच आदि उपवासों से जितनी विशुद्धि होती है, उससे कई गुणी विशुद्धि ज्ञानी (स्वाध्यायरत) जीव में भोजन करने (उपवास न करने) पर भी होती है।" (१०८)।

शिवार्य ने स्वाध्याय के अन्य तपों से अधिक निर्जराकारक होने का हेतु यह बतलाया है कि उसमें त्रिगुप्ति भावित (सिद्ध) होती है-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सज्झायभावणाए य भाविदा होंति सव्वगुत्तीओ।
गुत्तीहिं भाविदाहिं य मरणे आराधओ होदि॥ १०९॥

अनुवाद–''स्वाध्याय करने से सभी गुप्तियाँ सिद्ध होती हैं। गुप्तियों के सिद्ध होने से जीव मरते समय रत्नत्रयरूप परिणामों की आराधना में तत्पर होता है।''

इस गाथा के भाव को स्पष्ट करते हुए अपराजितसूरि लिखते हैं–

''**मनोवाक्कायव्यापाराः कर्मादानहेतवः सर्व एव व्यावर्तते स्वाध्याये सति, ततो भाविता गुप्तयः। कृताभिमतादियोगत्रयनिरोधश्च रत्नत्रय एव घटते इति सुखसाध्यता। अनन्तकालाभ्यस्ताशुभयोगत्रयस्य कर्मोदयसहायस्य व्यावर्तनमतिदुष्करं स्वाध्यायभावनैव क्षमा कर्त्तुमिति भावः।**'' (विजयोदयाटीका/भगवती-आराधना/गा. १०९)।

अनुवाद–''मन-वचन-काय के व्यापार कर्मास्रव के हेतु हैं। स्वाध्याय करते समय इन सब का निरोध हो जाता है, जिससे गुप्तियाँ निष्पन्न होती हैं। तीनों योगों का निरोध करनेवाला मुनि रत्नत्रय में ही संलग्न होता है, इस प्रकार रत्नत्रय की सुखपूर्वक सिद्धि होती है। जिन तीन अशुभ योगों का जीव ने अनन्तकाल से अभ्यास कर रखा है और कर्म का उदय जिसका सहायक है, उससे छुटकारा पाना अत्यन्त कठिन है। स्वाध्यायकि की क्रिया ही उससे छुटकारा दिलाने में समर्थ है।''

निम्नलिखित गाथा में भी शिवार्य ने स्वाध्याय के गुणों पर प्रकाश डाला है–

सज्झायं कुव्वंतो पंचिंदियसंवुडो तिगुत्तो य।
हवदि य एयग्गमणो विणएण समाहिदो भिक्खू॥ १०३॥ भगवती-आराधना।

अनुवाद–''जो मुनि विनय से युक्त होकर स्वाध्याय करता है, उसकी पाँचों इन्द्रियाँ विषयों से निवृत्त हो जाती हैं, तीनों गुप्तियाँ सधती हैं और मन एकाग्र हो जाता है।''

टीकाकार अपराजित सूरि ने इस गाथा का अभिप्राय निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया है–

''**ज्ञानविनयेन समन्वितो भूत्वा यः स्वाध्यायं करोति 'तिगुत्तो य होदि' तिसृभिर्गुप्तिभिश्च भवति, मनसोऽप्रशस्तरागाद्यनवलेपात्, अनृत-रूक्ष-परुष-कर्कशात्मस्तवन-परदूषणादावव्यापृतेः, हिंसादौ शरीरेणाप्रवृत्तेश्च---एकमुखान्तःकरणश्च भवति भिक्षुः स्वाध्याये रतः। एतदुक्तं भवति–ध्याने प्रवृत्तिमप्यासादयति। न ह्यकृतश्रुतपरिचयस्य धर्मशुक्लध्याने भवितुमर्हतः।**'' (विजयोदयाटीका/भग.आरा./गा. १०३)।

अनुवाद–''जो साधु ज्ञानविनय से समान्वित होकर स्वाध्याय करता है, वह तीन गुप्तियों से युक्त हो जाता है, क्योंकि उस समय उसका मन अप्रशस्तरागादि-विकार से लिप्त नहीं होता, वह असत्य, रूक्ष, कठोर, कर्कश आदि वचन नहीं बोलता, आत्मप्रशंसा एवं परनिन्दा नहीं करता और शरीर से हिंसादि में प्रवृत्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय में रत भिक्षु का अन्तःकरण एकमुख (एकाग्र = एक विषय के चिन्तन में केन्द्रित) हो जाता है अर्थात् ध्यान में भी उसकी प्रवृत्ति हो जाती है। जो श्रुत से परिचित नहीं हुआ है, उसको धर्मध्यान और शुक्लध्यान नहीं होते।''

शिवार्य भगवती-आराधना में आगे कहते हैं–

आदपरसमुद्धारो आणा वच्छल्लदीवणा भत्ती।
होदि परदेसगत्ते अव्वोच्छित्ति य तित्थयस्स॥ ११०॥

इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए अपराजित सूरि लिखते हैं–

''**आत्मनः परस्य वा उद्धरणमुद्दिश्य व्यापृतः स्वाध्याये स्वकर्माण्यपि साधयति परेषामप्युपयुक्तानाम्। 'आणा' ''श्रेयोऽर्थिना हि जिनशासनवत्सलेन कर्त्तव्य एव नियमेन हितोपदेशः**'' (वरांगचरित/१/१३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्याज्ञा सर्वविदां, सा परिपालिता भवतीति शेषः। --- वात्सल्यप्रभावना परेषामुपदेशकत्वे कृता भवति।---भक्तिश्च कृता भवति जिनवचने तदभ्यासात्।---श्रुतमपि रत्नत्रयनिरूपणे व्यापृतत्वात् तत्रस्थं भवति। ततोऽयं अर्थः—श्रुतस्य मोक्षमार्गस्य वा अव्युच्छित्तिरिति।'' (विजयोदयाटीका/भग.आरा./गा.११०)।

अनुवाद—''अपने और दूसरों के उद्धार के उद्देश्य से जो स्वाध्याय में लगता है, वह अपने भी कर्मों का विनाश करता है और उसमें उपयुक्त दूसरों के भी कर्मों का। सर्वज्ञ की जो आज्ञा है कि कल्याण के इच्छुक जिनशासन के प्रेमी को नियम से धर्मोपदेश करना चाहिए, उसका भी पालन होता है। दूसरों को उपदेश करने पर वात्सल्य का प्रकाशन और प्रभावना होती है। **जिनवचन के अभ्यास से जिनवचन में भक्ति प्रदर्शित होती है।** दूसरों को उपदेश देने से मोक्षमार्ग अथवा श्रुतरूप तीर्थ का विच्छेद नहीं होता, तीर्थपरम्परा अक्षुण्ण रहती है। श्रुत भी रत्नत्रय का कथन करने के कारण तीर्थ है। अतः स्वाध्यायपूर्वक परोपदेश करने से श्रुत और मोक्षमार्ग सदा प्रवर्तित रहते हैं।''

इन गुणों के कारण स्वाध्यायतप सभी तपों में सर्वश्रेष्ठ है।

रतनचन्द्र जैन

कर्म मथानी में सपनों को

मनोज जैन 'मधुर'

छोटी मोटी बातों में मत
धीरज खोयाकर
अपने सुख की चाहत में मत
आँख भिगोया कर।

काँटोंवाली डगर मिली है
तुझे विरासत में
सुख की किरणें छिपी हुई हैं
तेरे आगत में
देख यहाँ पर खाई पर्वत
सब हैं दर्दीले
कदम कदम पर लोग मिलेंगे
तुझको दर्दीले

कुण्ठओं का बोझ न अपने
मन पर ढोयाकर

बेमानी की लाख दुहाई
देंगे जगवाले
सुनने से पहले जड़ लेना
कानों पर ताले
मुश्किल में दो चार मिलेंगे
तुझको लाखों में
तुझे दिखाई देगी करुणा
उनकी आँखों में

अपने दृग-जल से तू उनके
पग को धोयाकर

कट जाएगी रात, सबेरा
निश्चित आयेगा
जो जितनी मेहनत करता
फल उतना पाएगा
समय चुनोती देगा तुझको
आकर लड़ने की
तभी मिलेंगी नई दिशायें
आगे बढ़ने की

मन के धागे में आशा के
मोती पोया कर

बीज वपन कर मन में साहस
धीरज दृढता के
छट जाएँगे बादल मन से
संशय जड़ता के
सब को सुख दे दुनिया आगे
पीछे घूमेगी
मंजिल तेरे स्वयं चरण को
आकर चूमेगी

कर्म मथानी में सपनों को
रोज विलोयाकर

सी.एस.13, इन्दिरा कालोनी
बाग उमराव दूल्हा, भोपाल म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षडावश्यक आज क्यों आवश्यक?

मुनि श्री प्रणम्यसागर जी
आचार्य श्री विद्यासागर जी के शिष्य

व्यक्ति जब-जब दु:खी होता है, तब उसके पीछे एक ही कारण होता है कि उसे किसी से जो अपेक्षा थी उसकी पूर्ति नहीं हुई। पर वस्तु की इच्छा होना मानव की सहज प्रकृति है। अपने दैनिक जीवन में प्रत्येक गृहस्थ पहले अनेक सपने सँजोता है, अनेक योजनायें बनाता है, अनेक प्रकार की महत्त्वाकांक्षायें रखता है। उन सबकी पूर्ति कदापि भी नहीं हो सकती। जितनी मन की हो जाती है, उससे उसकी इच्छा शक्ति बढ़ जाती है और पुन: उससे अधिक और अधिक पाने की, संग्रह करने की वृत्ति बलवती बनी रहती है। परिणाम अन्तत: सब कुछ करके भी, सब कुछ पाके भी, सब कुछ होके भी सन्तुष्टि, शान्ति, सुख और आनन्द से दूर ही महसूस करता है। इच्छापूर्ति होने पर जो हमने इन्जॉय (enjoy) किया, वह भी कुछ देर तक। ऐसा कुछ नहीं जो हमारी अपनी चीज हो, जिस पर हमारा अधिकार हो, जो स्थायी हो। ऐसा क्यों होता है? क्या आपने सोचा, अपने से पूछा या किसी से इन विचारों को शेयर (share) किया? नहीं, तो आइये हम चलें ज्यादा तर्क किये बिना ज्यादा कुछ सोचे बिना, एक ऐसे रास्ते पर जो सच्चा सुखद और शाश्वत है।

तर्क और सोच के लिये मना इसलिये है कि इन उलझनों में, तो हम पहले ही उलझे हैं, इसलिये तर्क-वितर्क से कुछ सीखने में समय बरबाद न करके हम चलते हैं, उस पथ पर जो अब तक अछूता है या जिसको पाकर के भी हम, उसका समुचित उपयोग न कर पाये।

ऋषि-महात्माओं ने जिस मार्ग को स्वयं अपनाया उसी पर चलने के लिये सदा गृहस्थों को भी प्रेरित किया है। कई मनीषियों का विचार है कि श्रावक के षट्कर्म एक अर्वाचीन पद्धति है, प्राचीन परम्परा तो वही है जो मुनियों की है। श्रावक भी मुनि की तरह षडावश्यकों का पालन करता था। पर धीरे-धीरे व्यस्तता बढ़ी, प्रभावना में उतार-चढ़ाव आये तो श्रावक इन आवश्यकों से दूर हो गया और आचार्यों ने सम-सामयिकता को ध्यान में रखते हुए देवपूजा आदि षट्कर्म का नियम बना दिया। आज की स्थिति में वे जैनी भाई बहुत कम बचे हैं जो इन षट्कर्मों या षड् आवश्यकों का बखूबी पालन करते हों। परिणाम! मानसिक तनाव, हृदयाघात, केन्सर, ब्रेन हेमरेज, ट्यूमर, डायिबिटीज, मोटापा, हाई ब्लड प्रेशर, आदि अनेक प्रकार के शरीरिक और मानसिक रोगों को आमंत्रण।

विज्ञान चाहे कितना ही तकनीकी विकास कर ले, चाहे कितना ही आसमान में उड़ाने भर ले, चाहे कितनी ही सुविधाएँ जुटा ले, चाहे जितना अन्तरिक्ष में आवास बना ले पर सुख की खोज में उसे लौटना होगा, अन्ततोगत्वा अपने में लौटना होगा, अपने में सन्तुष्ट होना होगा और अपने तक ही सीमित।

जो लोग धर्म से डरते हैं या धर्म करने में हिचकते हैं या जो धर्म में रुचि रखते हैं उन सबके लिये यह छह कार्य प्रतिदिन आवश्यक रूप से करने योग्य हैं। सुखी जीवन बनाने के यह छह सूत्र हैं।

प्रथम सूत्र है-स्तवन, स्तुति–अर्थात् अपने से ज्यादा शक्तिमान्, स्वस्थ और निर्दोष व्यक्तित्व की ओर दृष्टिपात। इस फार्मूले को आप अपनायें, क्योंकि चिन्ता प्रत्येक मानवीय मस्तिष्क का एक रोग है। इस चिन्ता से बचने के लिये उस चेतना को याद करें, जो सुपर है, जिससे बढ़ के कोई नहीं। चेतना, एक ऐसी शक्ति का स्रोत है, जो सबके अन्तस में विद्यमान है। स्तुति करने से हम निराशा, विषाद, अवसाद और अनिद्रा जैसी स्थितियों पर नियन्त्रण कर सकते हैं। जब हम परेशान होते हैं, तो हमारी शक्ति का अपव्यय होने लगता है, उसे रोकें और उसे रोकने का सबसे आसान तरीका है पंचपरमेष्ठी की पूजा, स्तुति, उनके गुणों का आल्हादित होकर गान करना, भक्ति करना, जोर से स्तुति पढ़ना। एक-एक करके चौबीस तीर्थकरों का गुणगान, उनके सहस्र नाम का उच्चारण आस्था और लगन के साथ अपने को उस महा चैतन्यवान्, शक्तिमान् सत्ता के प्रति समर्पित कर देना। हम बिना आस्था के जी नहीं सकते। हम में से हर एक की कहीं न कहीं आस्था रहती है। यह आस्था एक शक्ति है इस शक्ति को मोड़ दें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस मूर्ति की तरफ जो शान्त है, जिसकी मुख मुद्रा में अनेकों रहस्य छिपे हैं, जिसकी आँखें अब इस विश्व की ओर देखने के लिये नहीं उठती हैं, जिसने सब कुछ कर लिया है, इसलिये हाथ पर हाथ रखे बैठा है, जिसे कहीं नहीं जाना है, जो स्थिर है, जिसमें काम नहीं, वासना नहीं, चिन्ता नहीं, मान-अपमान का एहसास नहीं, उस वीतराग, निर्विकार के चरणों में भक्ति आस्था से भर जाना। किसी ने कहा है कि "आस्था उन शक्तियों में से एक है जिनके द्वारा मनुष्य जीवित रहते हैं और इसके पूर्ण अभाव का अर्थ है धराशायी हो जाना।"

दूसरा सूत्र है- प्रार्थना, वन्दना अर्थात् बन्धना- जब हम चौबीस तीर्थंकरों की थोड़ी थोड़ी स्तुति से सबके गुणों में एक जैसा पन ही देख लेते हैं, तो मन होता है कि क्यों न हम एक ही महापुरुष का गुणगान अच्छे ढँग से करें, बस इसी मनोवृत्ति का नाम है वन्दना। एक ही तीर्थंकर/महापुरुष की चेतना में अपने को देखना, उसी के स्तुति-सरोवर में स्नान करना और अपने को शुद्ध बना लेना अनेक द्वन्द्वों और उलझनों को जीते जागते भूल जाना। यही जीवन का वह क्षण है, जब हम महसूस कर सकते हैं कि हाँ, हमने आज जीवन जिया है। बाकी का जीवन तो यूँ ही बिताया है। हर दिन हमें ऐसे ही जीना है ताकि चिन्ता की गठरी इकट्ठी होकर दिमाग में ट्यूमर का रूप न ले ले। डॉ० कैरेल ने एक लेख में कहा था- "प्रार्थना किसी के द्वारा उत्पन्न ऊर्जा का सबसे सशक्त रूप है। यह शक्ति उतनी ही वास्तविक है जितनी की गुरुत्वाकर्षण की शक्ति। एक डॉक्टर होने के नाते मैंने देखा कि सभी चिकित्साओं के असफल हो जाने के बाद भी लोग प्रार्थना के शांत प्रयास द्वारा अपने दुःख और रोग से मुक्त हो गये। प्रार्थना रेडियम की तरह चमकदार, अपने आप उत्पन्न होनेवाली ऊर्जा है। प्रार्थना में इन्सान समस्त ऊर्जा के अनंत स्रोत के संपर्क में आकर अपनी सीमित ऊर्जा को बढ़ा सकता है। जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हम अपने आपको उस अविनाशी शक्ति के साथ जोड़ लेते हैं, जो पूरे ब्रह्मांड को चलाती है। जब भी हम दिल से प्रार्थना करते हुए ईश्वर को संबोधित करते हैं, हम अपनी आत्मा और शरीर दोनों को बेहतर बना लेते हैं। ऐसा नहीं हो सकता कि कोई भी आदमी या औरत एक पल के लिये भी प्रार्थना करे और उसे बेहतर परिणाम न मिले।"

तीसरा सूत्र-प्रत्याख्यान- यानी प्रतिदिन अपने दुर्गुणों का त्याग करना। हम पापों के पिण्ड हैं, हमारे अन्दर अनेक दुर्गुण हैं, हमने अनेक मूर्खतायें की है। So many Demerits I have. मेरे पास अनेक छोड़ने योग्य, त्यागने योग्य भाव हैं। उनके त्याग बिना हम कभी भी हीन भावों से अपनी आलोचनाओं से अपनी अव्यावहारिक प्रवृत्तियों से निजात नहीं पा सकते हैं। अतः अपने दुर्गुणों का निष्पक्ष परीक्षण करें। आत्मनिरीक्षण करें। प्रतिदिन एक बुरी आदत को नहीं करने का संकल्प लेकर हम इस प्रत्याख्यान से अपना मनोबल बढ़ा सकते हैं। यदि हम List बनाकर एक बुरे भाव या आदत को नोट करके निरीक्षण करेंगे तो देखेंगे हमारा विकास हुआ है। लोगों ने मुझे पसन्द किया है और हम स्वयं में संतुष्ट हैं। अतः प्रत्याख्यान मनोवैज्ञानिक ढँग से आत्म-उत्थान का सोपान है।

चतुर्थ सूत्र-प्रतिक्रमण / वैर कम- हमने काम-क्रोध के वश होकर जो अतिक्रमण किया, अपने स्वरूप से बहुत दूर चला गया था, उस सब कायिक-वाचिक-मानसिक विकारों को प्रायश्चित्त करके अपने आप में आने का यह एक प्रक्रम है। आत्म आलोचना से, व्यर्थ के अभिमान से उगी घास-फूस रूपी बुराइयों को हम उसी दिन काट देते हैं, उस फसल को हम बढ़ने नहीं देते। मैं ही अपना मित्र हूँ और मैं ही अपना शत्रु हूँ। अपनी बदकिस्मती का कारण भी मैं हूँ और अपने समुन्नत भाग्य का भी। अतः अपने में रहने के लिये लौटना ही प्रतिक्रमण है। हमने विगत मैं जो छोटी छोटी बातों पर बड़ी-बड़ी उलझनें बना लीं, मन में वैर-बुराई का ज़हर भर लिया वह सब भूल जाना ही सच्चा प्रतिक्रमण है। हमें सबको क्षमा करना है। क्षमा ही आत्मा का बल बढ़ाती है। सबसे बड़ी हार उसी की है, जो दूसरे से वैर रखता है। जिसका किसी से वैरभाव नहीं वही जीवित जीवन जीता है। मनोवैज्ञानिकों ने शोध करके इस तथ्य को उजागर किया है कि न्यायालय में चलनेवाले पारिवारिक, सामाजिक मामलों में अधिकतर झगड़े भाई-भाई, पति-पत्नी, पिता-पुत्र के बीच छोटी-छोटी बातों से शुरू होते हैं। यदि उन छोटी-छोटी बातों को उसी समय भुला दिया जाय, माफ कर दिया जाये, तो कोर्ट कचहरी तक झगड़ा कभी न पहुँचे। महान् वह है, जो बड़ी-बड़ी बातों को भी बहुत तुच्छ समझकर तनावमुक्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहता है। जो लोग छोटी-छोटी बातों को तिल का ताड़ बनाने जैसी मानसिकता रखते हैं वे न केवल दूसरों का समय बरबाद करते हैं, बल्कि अपने आपको भी कष्ट में बनाये रखते हैं। सही मायने में भावसहित प्रतिक्रमण करना, मन को विशुद्ध, तरोताजा बनाने का सही आध्यात्मिक तरीका है। पुरानी बातों को मन में रखे रहना और उस विद्वेष के ज़हर को समय पर न उगलने की आदत Nurvous break down जैसे रोगों को जन्म देती है। दिल के तमाम रोगों पर रोक लगाने के लिये यह प्रतिक्रमण ही श्रेष्ठ तरीका है।

पंचम सूत्र–कायोत्सर्ग यानी दूर है उपसर्ग– इसमें काय को छोड़कर मात्र श्वासोच्छ्वास पर मन को टिकाना होता है। श्वास हमारा सूक्ष्म प्राण है। जिस समय श्वास के आवागमन पर ध्यान दिया जाता है उस समय हम प्राणमय हो जाते हैं। प्राण एक शक्ति है, जिससे हमारा जीवन संचालित होता है। सही मायने में जीवन का आनन्द इसी प्रक्रिया में है। वे क्षण ही हमने जिये हैं, जो हमने प्राणों के साथ जिये हैं। कायोत्सर्ग में प्राण-ऊर्जा का संचार शरीर के एक-एक अंग-उपांग के अन्तरङ्ग हिस्से तक होता है। मन एक नयी ऊर्जा से भर जाता है। योगासन में शवासन इसी कायोत्सर्ग का रूप है। महा प्राणशक्ति को दीर्घ आयाम के साथ सूक्ष्म अति सूक्ष्म बनानेवाला योगी इसी कायोत्सर्ग की प्रक्रिया से गुजरता है। यह प्राणायाम का एक अंग है। प्रत्येक श्रमण, मुनि के लिये दिन-रात में प्रत्येक आवश्यक क्रिया से पूर्व और पश्चात् कायोत्सर्ग नियामक है। प्रमादवश कहें या स्थिरता के अभाव के कारण कहें, इस प्रक्रिया का स्थान बहुतायत में अब नव बार णमोकार मंत्र पढ़ने मात्र से पूरा हो जाता है। इस क्रिया ने कायोत्सर्ग का महत्त्व कम कर दिया है। श्रमण या श्रावक यदि नौ बार णमोकार मंत्र को श्वासोच्छ्वास के आयाम के साथ पूर्ण करते हैं या मात्र श्वासोच्छ्वास के साथ, तभी वे सही कायोत्सर्ग का फल प्राप्त कर सकते हैं। आगम में इस कायोत्सर्ग के बत्तीस दोषों का वर्णन है, जिनकी तरफ ध्यान श्रावक तो दूर, श्रमण भी नहीं रखते हैं। इस कायोत्सर्ग की कमी से ही आगे आनेवाली आत्मिक प्रक्रिया, सामायिक, निर्दोष नहीं हो पाती है। अतः समता, साम्यभाव की प्राप्ति के लिये कायोत्सर्ग करना प्रतिदिन मानसिक दोषों का अतिसार करने के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

छठवाँ सूत्र-सामायिक, अन्तः प्रज्ञा की परिचायक– हे भगवन्! मेरे साथ अच्छा या बुरा जो भी होना था वह अच्छा हुआ। वह नियति थी। वह कर्म का और मात्र हमारे ही किये कर्म का फल है। मैं तैयार हूँ आगामी समय में भी उन कर्मों का फल भोगने को। जाग्रत रहकर सुख और दुःख को हर्ष-विषाद रहित होकर मुझे अनुभव करना है। देह को छोड़कर मुझे किसी का संवेदन नहीं है। देह रोगसहित है, तो भी मुझे पीड़ा से विचलित नहीं कर सकती है। प्रत्येक कर्म का फल भोगने की स्वीकृति ही सहज सामायिक है। आचार्य श्री गुणभद्र जी कहते हैं कि रोग को दूर होने का कोई उपाय हो, तो कर लो और कोई उपाय न बचा हो, तो समता-अनुद्वेग ही अन्तिम उपाय है। मैं इस उपाय को सहर्ष स्वीकार करता हूँ। नश्वर देह में रहकर भी अविनश्वर आत्मा का संवेदन, उसकी प्राप्ति की लगन और अनुभव का आत्मिक आनन्द इस सामायिक में है। इसी प्रक्रिया की पराकाष्ठा, ध्यान और समाधि है।

इस प्रकार ये छह आवश्यक वर्तमान परिप्रेक्ष्य में श्रमण या श्रावक के शारीरिक और मानसिक विकास के लिये नितान्त आवश्यक हैं। मात्र शारीरिक स्वास्थ्य ही सब कुछ नहीं होता है, जिसकी प्राप्ति के लिये आज का युग हर संभव प्रयत्न कर रहा है। शरीर को संचालित करनेवाले शाश्वत तत्त्व आत्मा की ओर केन्द्रित करनेवाली यह षड्-आवश्यकों की प्रक्रिया बहु आयामी है। इस प्रक्रिया से चलनेवालों को शरीर और मन-वचन की स्वस्थता स्वतः प्राप्त होगी। अतः सभी चिन्ता, तनाव, दैहिक रोग और अस्थिरता के निवारण के लिये ये षडावश्यक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से बहुत महत्त्व के है। आत्मशान्ति प्रत्येक आत्मा का लक्ष्य होना चाहिये, जो इच्छाओं पर विजय प्राप्त करके स्वयं में स्वयं के द्वारा ही प्राप्त होती है। आचार्य समन्तभद्र कहते हैं- **'स्वदोषशान्त्या विहितात्मशान्तिः'** अर्थात् अपने दोषों के दूर होने से ही आत्मशान्ति प्राप्त होती है।

कलम शिखर तक पहुँचाती है, तीर्थों तक पहुँचाती है।
कलम सत्य का धर्म पालती, ईश्वर तक पहुँचाती है॥
योगेन्द्र दिवकर, सतना म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदिकाल की याद दिलाती दीवाली

उपाध्याय श्री निर्भयसागर जी

कार्तिक माह के अमावस्या की काली रात अपने अंदर दिव्य-ज्योति, दिव्य-प्रकाश, दिव्य-ज्ञान, दिव्य-ऊर्जा और वास्तविक सुख को आदिकाल से ही समाहित किये हुए है। प्रकाश को ज्ञान की प्रतिमूर्ति आदिकाल से माना गया है। जलते हुए दीपक का प्रकाश जीवन और ज्ञान का प्रतीक है, जब कि अंधकार अज्ञान और मौत का प्रतीक है। दीपक जलाना जीवन में सुचिता, संघर्ष, निर्भयता, स्वस्थ्यता, अर्थवृद्धि, परमार्थ सिद्धि आदि का भी प्रतीक है, इसलिए दीपमालिका जलाकर आनंद मनाना एक पर्व है जिसे दीवाली, दीपावली, दीपोत्सव व ज्योति-पर्व के रूप में मनाया जाता है। यह दीपावली राष्ट्रीय पर्व नहीं बल्कि अंतराष्ट्रीय पर्व है क्योंकि यह नेपाल, श्रीलंका, मॉरिशस जैसे देशों में दीपावली के नाम से मनाया जाता है। यूनान, ईरान, मलेशिया और अरब देशों में यह अलग-अलग समयों में ज्योति-पर्व के रूप में मनाया जाता है, जबकि वर्मा, जापान और थाईलैण्ड जैसे देशों में तोरोनगाशी नाम से मनाया जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार यह एक अनादिकालीन पर्व है।

जैन धर्मानुसार दीपावली- युग के आदि में सूर्य-प्रकाश तो था, परन्तु अग्नि और दीपक का प्रकाश नहीं था, तब जैन धर्मानुसार प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी ने पत्थर से पत्थर रगड़कर चिंगारी द्वारा अग्नि का आविष्कार कराकर भोजन पकाने एवं रात्रि में अंधकार से बचने के लिए दीपक जलाने की शिक्षा दी। (असि, मसि, कृषि, शिल्प, वाणिज्य और विद्या की शिक्षा दी)। इस प्रकार आदमी ने अंधकार पर विजय प्राप्त की जिसे ज्योति-पर्व के रूप में मनाया। अत: दीपावली हमें उस आदिकाल की याद दिलाती है, जब मानव ने अग्नि के दर्शन किये थे। परन्तु आज अलग-अलग धर्म एवं संप्रदायों से अनेकों घटनाएँ इस दीपावली पर्व से जुड़ी हुई हैं। जिसका स्वरूप प्राचीन काल में अलग था और वर्तमान में अलग है। परन्तु प्राचीन घटनाएँ आज भी महत्त्वपूर्ण हैं।

भगवान् महावीर स्वामी का निर्वाण- जैनधर्म के प्रर्वतक 24 तीर्थंकर हैं। उनके पंच-कल्याणक होते हैं, उनमें जब मोक्ष कल्याणक होता है, तब प्रत्येक तीर्थंकर का दीपमालिका जलाकर जल, चंदन, अक्षत आदि अष्ट द्रव्य से पूजा एवं लड्डू चढ़ाकर निर्वाण कल्याणक मनाया जाता है। 24वें तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामी वर्तमान शासन नायक हैं, उन्होंने 12 वर्ष तक कठोर तपस्या करके केवल ज्ञान प्राप्त किया, फिर 30 वर्ष तक संसारिक प्राणियों को अहिंसा धर्म का उपेदश दिया। कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशी को उपदेश देनेवाली धर्मसभा (समवशरण) को छोड़कर ध्यान-योग में लीन हो गये। इसी उपलक्ष्य में धनतेरस मनाते हैं। फिर भगवान् महावीर स्वामी ने अमावस्या की प्रात:कालीन बेला में निर्वाण की प्राप्ति की। उस उपलक्ष्य में सोलह दीपक जलाकर अर्ध्य सहित निर्वाण लड्डू चढ़ाकर दीपावली मनाई जाती है।

भगवान् महावीर स्वामी के प्रथम शिष्य गौतम गणधर स्वामी ने उसी दिन केवलज्ञान की प्राप्ति की। उसी उपलक्ष्य में शाम को गणधर-स्वामी की पूजा करके 8 या 16 दीपक जलाकर दीपावली मनाते हैं। आठ दीपक आठ कर्मों का नाश एवं अनंत-ज्ञान, अनंत-सुख आदि 8 गुणों की प्राप्ति के प्रतीक में जलाते हैं। 16 प्रकार की शुभ-भावना से धर्मतीर्थ के नायक तीर्थंकर बनते हैं, उसी के प्रतीक स्वरूप 16 दीपक जलाते हैं। प्रत्येक दीपक में 4-4 ज्योति जलाई जाती हैं। जो अनंत-ज्ञान, अनंत-दर्शन, अनंत-सुख, अनंत-शक्ति के प्रतीक होती हैं। 16 दीपक में कुल 64 ज्योति जलती हैं, जो 64 प्रकार की ऋद्धियों के प्रतीक होते हैं। जिसकी परम्परा आज भी जैनसमाज में प्रवाहमान है।

हिन्दु धर्मानुसार दीपावली-

श्रीराम का अयोध्या आगमन- हिन्दू धर्म के अनेक संप्रदाय हैं उनमें अनेक मान्यताएँ दीपावली से जुड़ी हैं। जैसे एक मान्यतानुसार मर्यादा पुरुषोत्तम राम के 14 वर्ष वनवास के उपरान्त अयोध्या आगमन पर लोगों ने दीप-मालिका जलाकर स्वागत किया। इसी उपलक्ष्य में दीप जलाकर दीपावली मानते हैं। परन्तु वाल्मीकि रामायण में इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है।

नरकासुर का वध- दूसरी मान्यता अनुसार नरकासुर ने इस पृथ्वी पर आतंक फैला रखा था और उसने बल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वक 16 हजार कन्याओं को बंदी बना रखा था। नारायण श्री कृष्ण ने उसका वध करके उसके आतंक से कन्याओं को मुक्त कराया। इसी खुशी में लोगों ने दीप जलाकर मिठाइयाँ बाँटी जिसे आज भी प्रतिवर्ष दीपावली के रूप में मनाते हैं।

गोवर्धन पूजा- तीसरी मान्यता अनुसार इन्द्र के कहने पर ग्वालबालों ने इन्द्र की पूजा करने इन्द्रोज यज्ञ करने का निश्चय किया क्योंकि इन्द्र ने कहा कि इससे अतिवृष्टि और अनावृष्टि से बचा जा सकता है। जब कृष्ण ने यह बात सुनी तो उन्होंने कहा- सुवृष्टि का कारण गोवर्धन पूजा है। अत: सभी इन्द्रोज पूजा छोड़कर गोवर्धन पूजा करने लगे। इन्द्र को जब इस घटना की जानकारी हुई, तब इन्द्र ने क्रोध में आकर प्रलयकारी वर्षा करने की आज्ञा मेघों को दे दीं। कृष्ण ने अँगूठे से गोवर्धन पर्वत उठाकर एवं सुदर्शन चक्र चलाकर उस वर्षा से ब्रजवासियों की रक्षा की। इन्द्र ने कृष्ण को विष्णु का अवतार मानकर क्षमा माँगी तब से गोवर्धन पूजा के रूप में दीवापली पर्व मनाया जाने लगा।

दीप जलाकर लक्ष्मी पूजन- चौथी मान्यता है कि अमावस्या की रात को दीप जलाकर लक्ष्मी पूजन करने से लक्ष्मी उस घर में आकर स्थायी निवास करने लगती है। इस मान्यता अनुसार एक कथा है कि एक राजा की सात बेटियाँ थीं। राजा ने बेटियों से कहा कि तुम सब ये स्वीकारो कि तुम मेरे भाग्य का खाती हो। इस बात को सुनकर छोटी बेटी ने इसे स्वीकार नहीं किया और कहा मैं अपने भाग्य का खाती हूँ। तब उस राजा ने क्रोध में आकर रास्ते से जा रहे लकड़हारे से उसका तत्काल विवाह कर दिया। राजकुमारी अपने लकड़हारे पति के साथ प्रसन्नतापूर्वक चली गई और पति से कहा कि तुम कभी खाली हाथ घर नहीं आना। लकड़हारे को एक दिन कुछ न मिला तो वह मरा हुआ साँप लेकर घर आ गया। राजकुमारी ने उसे छत पर डाल दिया। प्रात:काल रानी रत्नों से जड़ा सोने का हार उतारकर स्नान करने लगीं, उस समय एक गिद्ध उस हार को उठाकर लकड़हारे के घर के ऊपर से जा रहा था, तब मरे हुए साँप को देखकर गिद्ध हार छोड़कर साँप लेकर उड़ गया। राजकुमारी ने उसे उठाकर रख लिया। बाद में रानी को ज्ञात हुआ कि उसका हार लकड़हारे के पास है। उस हार के माँगने पर लकड़हारिन ने कहा कार्त्तिक माह की अमावस्या को राजमहल सहित पूरे नगर में अँधेरा रहेगा और मेरे घर दीप जलेगा इस शर्त पर मैं तुम्हें हार वापस देती हूँ। रानी ने इसे स्वीकार कर लिया। कार्तिक की अमावस्या को उस लकड़हारे के घर दीप जला, लक्ष्मी ने उसका आदर-सत्कार स्वीकार किया और वहीं स्थायी रहने लगीं।

भैरव एवं काली की पूजा- पाँचवीं मान्यता अनुसार जब कलयुग का प्रारंभ हुआ, तब काली ने कलकी अवतार को मार करके समस्त कलयुग को समाप्त करना चाहा। इसी उद्देश्य से वह राक्षसों का संहार करती हुई आगे बढ़ रही थीं कि कलकी राक्षस अपना अंत निकट जानकर देवों की शरण में पहुँचा, तब उन्होंने सलाह दी कि शंकर भगवान् के पास जाओ वहाँ तुम्हारा समाधान हो जाएगा। भगवान् शंकर जी ने कहा तुम में से कोई एक मेरा रूप धारण करके रास्ते पर लेट जाओ। भैरव ने शिव का रूप धारण किया। जैसे ही काली का पैर उस पर पड़ा है वैसे ही मुख से जीभ बाहर निकल आई और संहार रुक गया। उस समय 10 चांदी के सिक्के भैरव धारण किए हुए थे। इसी उपलक्ष्य में दीपावली मनाई जाने लगी।

दीपदान- छठवीं मान्यता है कि भगवान् वामण ने राजा बलि की धरती को तीन कदम में नापा था। जिससे मौत उसके सामने दिखने लगी थी। तब भगवान् ने कहा जो व्यक्ति अमावस्या की प्रत्युष बेला में स्नान करके दीप दान करता है, उसे यमराज यातना नही देता और लक्ष्मी सदा सहायक होती हैं।

सातवीं मान्यता अनुसार प्राचीनकाल में कार्तिक माह की अमावस्या को दीप जलाकर यात्रा करना शुभ मानते थे। यात्रा करते समय नाविक के लिए लकड़ी के ऊपर ऊँचे दीपक प्रकाश-स्तंभ का काम करते थे। जिसके सहारे अंधेरे में भी वे अपने गन्तव्य तक पहुँचते थे।

(लेखक एम.एस.सी. तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठित दिगम्बर जैनमुनि हैं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध-परमेष्ठी का स्वरूप और उनकी महिमा

पं० रतनलाल जी जैन, इन्दौर

अनादिकाल से आज तक अनन्तानंत सिद्ध परमात्मा हो गये, हो रहे हैं और होंगे। जिस प्रकार भट्ठी धमनी आदि कारणों की युक्तिपूर्वक योजना करने से किट्ट कालिमा आदि सब मैल निकल जाता है और शुद्ध सुवर्ण की प्राप्ति हो जाती है, उसी प्रकार जो यह संसारी आत्मा ज्ञानावरणादि (घाति-अघाति) कर्मों से मलिन हो रहा है उसे शुद्धोपयोग रूप भट्ठी में तपाकर जिसने घातिया-अघातिया कर्मरूप कालिमा को निकाल कर, शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति की है और जो लोकशिखर पर विराजमान हुआ है, जो सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व और अगुरुलघुत्व आदि गुणों से सहित है वह सिद्धात्मा है।

जो पूर्णरूप से अपने स्वरूप में स्थित है, कृतकृत्य हैं, जिन्होंने अपने साध्य को सिद्ध कर लिया है और जिनके ज्ञानावरणादि आठ कर्म नष्ट हो चुके हैं उन्हें सिद्ध कहते हैं।

जिन्होंने सुदूर भूतकाल से बाँधे हुए आठ प्रकार के कर्मों को शुक्लध्यान-रूप अग्नि के द्वारा नष्ट कर दिया है अथवा सिद्ध-गति को प्राप्त कर लिया है और जो पुनर्जन्म से छूटकर पूर्णरूप से अपने को प्राप्त कर चुके हैं ऐसे सिद्धों को निरंतर नमस्कार है।

ये सिद्ध भगवंत अंजनसिद्ध, गुटिकासिद्ध, खड्ग-सिद्ध, माया-सिद्धादि से विलक्षण स्वात्मोपलब्धि-रूप केवलज्ञानादि अनंतगुणों से युक्त हैं। कुन्दकुन्द स्वामी नियमसार में कहते हैं-

णट्ठट्ठकम्मबंधा अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा।
लोयग्गठिदा णिच्चा सिद्धा ते एरिसा होंति॥

(गा. ७२)

जिन्होंने अष्टकर्मों के बन्धनों को नाश कर दिया है, जो आठ महागुणों से सहित हैं तथा लोकाग्र में स्थित नित्य और अविनाशी हैं वे सिद्ध हैं। तथा जन्म-मरण से रहित, उत्कृष्ट, अष्टकर्मों से दूरवर्ती, शुद्ध ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य चार स्वभावधारी, क्षयरहित, अविनाशी तथा छेदरहित-तत्त्व ही सिद्ध परमात्मा हैं। सिद्ध परमेष्ठी अनन्तज्ञानी हैं, कृतकृत्य हैं, देवाधिदेव हैं, इन्द्र-चक्रवर्ती-तीर्थंकर आदि समस्त महापुरुषों के द्वारा वंदनीय परमपुरुष, परमब्रह्म, परमदेव, परमेश्वर, परमकृपालु, परमदयालु परमेष्ट, परमानन्द, परमज्योति, अजर, अचर, अचल, अक्षय, अकृत, अकल, अकथ, अवेदी, अविकारी, असंगी, अरंगी, अभोगी, अयोगी, अरोगी, अभेदी, अखेदी, अविनाशी, अक्रोधी, अमानी, अमायी, अलोभी, अरागी, अमोही, अगद, अगम, अजय, निर्मेद, निर्विकल्प, निराकार, निरंजन, निर्मल, निर्भय, निर्मम, निर्मोही, निर्लेप, निर्वंधि, निर्विकार, निर्विघ्न, जगत्दयाल, जगत्प्रतिपाल, जगदाधर, जगत्केतु, जगदानन्द, जगदीश, जगन्नाथ, जगदीश्वर, जगद्गुरु, जगज्ज्योति, महाज्ञानी, महाध्यानी, महातेजस्वी, महानुभाव, महापुरुष, महाप्रभु, महाबली, महात्मा, दीनबन्धु, दीनानाथ, दीनदयाल, दीनरक्षक, दीनवत्सल, ज्ञानसागर, ज्ञानगम्य, ज्ञानदीपक, ज्ञानवान्, गुणरत्नाकर, क्षमासागर, धर्मदिवाकर, अशरण-शरण, भवभयहरण, शिवसुखकरण, सत्वानुशरण, कुमतिकुठार, पाप-विडार, ज्ञानप्रचार, शक्ति संचार, पतितपावन, भक्तवत्सल, सच्चिदानन्द, सदानन्द, बुद्धानन्द, ज्ञानानन्द, निजानन्द, परमानन्द, सर्वज्ञान, सर्वदर्शनादि उत्तमोत्तम गुणांकृत सिद्ध परमेष्ठी हैं।

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती द्रव्यसंग्रह में सिद्ध परमेष्ठी का स्वरूप कहते हैं-

णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवएहिं संजुत्ता॥ (गा.१४)

जो जीव ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से रहित हैं, सम्यक्त्व आदि आठ गुणों से सहित हैं और अंतिम शरीर से कुछ कम हैं और उर्ध्वगमन स्वभाव से लोक के अग्रभाग में स्थित हैं, नित्य हैं तथा उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य से युक्त हैं वे सिद्ध परमात्मा हैं और भी,

णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो॥

(गा. ५१)

आठ कर्मों तथा पाँच शरीरों से रहित, लोक-अलोक को जानने व देखनेवाले, पुरुषाकार से लोक के शिखर पर स्थित आत्मा सिद्ध-परमात्मा हैं, उनका ध्यान करो।

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती गोम्मटसार जीवकाण्ड में कहते हैं-

अट्ठविहकम्मवियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा॥

(गा.६८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो ज्ञानावरणादि अष्टकर्मों से रहित हैं, अनन्त सुखरूपी अमृत के अनुभव करनेवाले शान्तिमय हैं, मिथ्यादर्शनादि भावकर्मरूपी अञ्जन से रहित हैं, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु ये आठ गुणों से सहित हैं, कृतकृत्य हैं- अर्थात् जिन्हें कोई कार्य करना बाकी नहीं रहा है, लोक के अग्रभाग में निवास करनेवाले हैं वे सिद्ध परमात्मा हैं। और भी,

जह कंचणग्गिगयं, मुंचइ किट्टेण कालियाए य।
तह कायबंधमुक्का, अकाइया झाणजोगेण॥

(गा.२०३)

जिस प्रकार सोलह ताव के द्वारा तपाए हुए सुवर्ण में बाह्य किट्टिका और अभ्यन्तर कालिमा इन दोनों ही प्रकार के मल का बिल्कुल अभाव हो जाने पर, फिर किसी दूसरे मल का सम्बन्ध नहीं होता उसी प्रकार महाव्रत और धर्मध्यानादि से सुसंस्कृत एवम् सुतप्त आत्मा में से एक बार शुक्लध्यान रूपी अग्नि के द्वारा बाह्य काय और अन्तरंग मलकर्म के सम्बन्ध के सर्वथा छूट जाने पर फिर उनका बन्ध नहीं होता और वे सदा के लिए काय और कर्म से रहित होकर सिद्ध हो जाते हैं।

आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी नियमसार में कहते हैं-

णट्ठट्ठकम्मबंधा अट्ठमहागुणसमण्णिया परमा।
लोयग्गठिदा णिच्चा, सिद्धा ते एरिसा होंति॥

(गा. ७२)

परिपूर्णरूप से अन्तर्मुखाकार ध्यान और ध्येय के विकल्प से रहित जो निश्चय परम शुक्लध्यान है उस ध्यान के बल से आठ कर्मों के बन्धसमूह को जिन्होंने नष्ट कर दिया है जो क्षायिक सम्यक्त्व, अनंतज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाधत्व इन आठ गुणों की पुष्टि से सन्तुष्ट हैं। तीन तत्त्व के स्वरूपों में विशिष्ट गुणों के आधारभूत होने से जो परम हैं अर्थात् बहिस्तत्त्व, अन्तस्तत्त्व और परमात्म तत्त्व स्वरूप हैं। तीन लोक के शिखर से ऊपर गति-हेतुरूप धर्मास्तिकाय का अभाव होने से लोक के अग्रभाग (तनुवातवलय) में विराजमान हैं, व्यवहारनय से अभूतपूर्व पर्याय से प्रच्युत न होने से जो नित्य हैं, अविनाशी हैं ऐसे वे भगवान् सिद्धपरमेष्ठी होते हैं।

'सिद्धभक्ति' में कहा गया है-

अट्ठविहकम्ममुक्के अट्ठगुणड्ढे अणोवमे सिद्धे।
अट्ठम पुढविणिविट्ठे णिट्ठियकज्जे य वंदिमो णिच्चं॥

ज्ञानावरणादि आठ प्रकार के कर्मों से मुक्त हुए, आठ गुणों से सम्पन्न अष्टम पृथ्वी (ईषत्प्राग्भार) अर्थात् मोक्षभूमि में स्थित और अपने कार्य को जिन्होंने समाप्त कर दिया है उन अनुपम सिद्धों को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।

जिन्होंने ज्ञानावरण की पाँच, दर्शनावरण कर्म की नौ, वेदनीय कर्म की दो, मोहनीय कर्म की अट्ठाईस, आयु कर्म की चार, नाम कर्म की तिरानवे, गोत्रकर्म की दो और अंतराय की पाँच इस प्रकार आठों कर्मों की १४८ प्रकृतियों को नष्ट कर दिया है वे सिद्ध परमात्मा होते हैं। उन सिद्धों ने जो सुख प्राप्त कर लिया वह अतिशय अर्थात् संसार अवस्था में प्राप्त सुखों से बहुत अधिक है, अव्याबाध बाधा से रहित है अर्थात् उस सुख की अनुभूति में कभी बाधा नहीं आती। अनन्त है-उसका कभी अन्त नहीं होता, अनुपम है- उसकी तुलना संसार के किसी भी सुख से नहीं की जा सकती। उत्कृष्ट है, इन्द्रिय विषयों से अतीत है। सिद्ध पद प्राप्त करने से पहले ऐसा सुख कभी प्राप्त नहीं हुआ और प्राप्त हो जाने के बाद वह कभी छूटता नहीं, सदा बना रहता है। वे परमात्मा मैल से रहित हैं। शरीर से, इन्द्रियों से रहित हैं। केवल ज्ञानमय हैं, विशुद्ध हैं, परमपद में स्थित हैं, परमजिन हैं, मोक्ष को देनेवाले हैं। वे अविनाशी हैं, नित्य हैं, अचल हैं और आलम्बन रहित हैं। आगे गमन नहीं करते। नियमसार में आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि-

णिव्वाणमेव सिद्धा, सिद्धा णिव्वाणमिदि समुद्दिट्ठा।
कम्मविमुक्को अप्पा, गच्छइ लोयग्गपज्जंतं॥

(गा. १८३)

निर्वाण (अवस्था) ही सिद्ध (अवस्था) है और सिद्धावस्था ही निर्वाण है। अर्थात् निर्वाण और निर्वाण-प्राप्त जीव में कोई भेद नहीं है। आत्मा कर्मों से मुक्त होती है, वह मुक्त होते ही ऊपर लोक के अग्रभाग तक जाती है जहाँ न सांसारिक सुख, न दुख, न पीड़ा, न बाधा, न जन्म, न मरण, न कर्म है, न नोकर्म है, न चिन्ता है, न आर्त और रौद्रध्यान है तथा धर्म्यध्यान और शुक्लध्यान भी नहीं है वही निर्वाण है।

आचार्यदेव गो. जीवकांड में गुणस्थानातीत सिद्धों का वर्णन करते हैं-

सिद्धों का स्वरूप कथन करने से अन्यमतावलम्बी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने-अपने मत के अनुसार ईश्वर को विभिन्न रूप से मानते हैं, उन सबके मत का सर्वदा निराकरण हो जाता है जैसे-

१. सदाशिव मत के अनुयायी जीव को सदा कर्म से रहित ही मानते हैं। उसके निराकरण के लिए उनसे कहा गया कि आठ कर्मों से रहित होने पर जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त होता है।

२. सांख्यमत में बन्ध, मोक्ष, सुख, दुख आदि प्रकृति को होते हैं, आत्मा को नहीं-इसके निराकरण को 'अनन्तसुख' स्वरूप विशेषण दिया है।

३. एक अन्य मत मुक्त जीव को लौटना मानता है। उसको दूषित करने के लिए निरंजन अर्थात् भावकर्मों से रहित बताया, क्योंकि नवीन कर्मबन्ध न होने से संसार में सिद्धात्मा का आगमन नहीं है।

४. बौद्धों का मत है कि सम्पूर्ण पदार्थ क्षणिक हैं। इस सिद्धान्त को दूषित करने के लिए कहा कि ईश्वर (सिद्ध) नित्य हैं, शाश्वत हैं, विनाश को प्राप्त नहीं होते हैं।

५. नैयायिक तथा वैशेषिक मुक्त अवस्था में बुद्धि आदि गुणों का विनाश मानते हैं, उनको समझाते हुए आ. देव कहते हैं कि सिद्ध ज्ञानादि आठ गुणों से सहित हैं और ये गुण कभी अभाव को प्राप्त नहीं होते हैं।

जो ईश्वर को सृष्टि का कर्त्ता मानते हैं, रचना करनेवाले मानते हैं उनसे कहा गया है कि ईश्वर तो कृतकृत्य अवस्था को प्राप्त हो गए हैं, उन्हें कोई भी कार्य करना शेष नहीं रहा है।

६. एक और मत है जिसके अनुसार-मुक्त जीव हमेशा ऊपर ही गमन करता जाता है कभी जीव ठहरता ही नहीं। उन्हें भी गुरु बताते हैं कि जहाँ तक धर्मद्रव्य का अस्तित्व है अर्थात् लोकाग्र तक ही जाते हैं, आगे गमन नहीं करते हैं, वहीं स्थित हो जाते हैं। इस प्रकार नीति एवं न्याय से अविरोध सिद्धों का स्वरूप बताया गया है।

भावप्राभृत में कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं कि-

भावविमुत्तो मुत्तो ण य मुत्तो बंधवाइमित्तेण।
इय भाविऊण उज्झसु गंधं अब्भंतरं धीरं॥ (गा.४३)

जो रागादि भावों से मुक्त है वही मुक्त है। किन्तु जो बन्धु बान्धव आदि से मुक्त है वह मुक्त नहीं है अर्थात् अभ्यन्तर परिग्रह के होते हुए मात्र बाह्य परिग्रह का त्याग करना कार्यकारी नहीं है। सम्पूर्ण परिग्रह का त्यागी ही मुक्त अवस्था को पा सकता है। जब दर्शनमोहनीय का तथा चारित्रमोह की अनन्तानुबंधी चौकड़ी का सर्वथा क्षय हो जाता है, तब क्षायिक ज्ञानरूपी सूर्य प्रकट होता है। वही क्षायिक सम्यग्दृष्टि क्षपकश्रेणी पर आरोहण करके घातिया कर्मों को नाशकर केवलज्ञानी बनते हैं तथा अघातियाँ कर्मों को भी ध्यान की अग्नि में भस्म करके कंचन समान बन जाते हैं। जैसे स्फटिक मणि जहाँ से भी देखो वहीं से ही निर्मल, **स्वच्छ**, सुन्दर है इसी प्रकार से सिद्धों का आत्मस्वरूप निष्कलंक होता है। प्रवचनसार में भी क्षायिक अतीन्द्रिय ज्ञान की महिमा का कथन है-

अपदेसं सपदेसं मुत्तममुत्तं च पज्जयमजादं।
पलयं गयं च जाणादि तं णाणमदिंदियं भणियं॥ ४१॥

जो ज्ञान प्रदेशरहित परमाणु वगैरह को, प्रदेश सहित जीवादि द्रव्यों को, मूर्त और अमूर्त पदार्थों को तथा उनकी आगे होनेवाली और नष्ट हुई पर्यायों को जानता है उस ज्ञान को अतीन्द्रिय ज्ञान कहा है। उस ज्ञान की महिमा का वर्णन नहीं हो सकता। पंडित द्यानतरायजी सिद्धपूजा में लिखते हैं "यमराज की चोट बचायक हो, अर्थात् छद्मस्थों से नहीं जीतनेवाले काल (मृत्यु) को भी आपने जीत लिया। जब जन्म ही नहीं तो मृत्यु कहाँ से होगी। "तुम ध्येय महामुनि ध्यायक हो" अर्थात् हे सिद्ध परमेष्ठी भगवान्! आप ध्येय हैं, केन्द्र हैं, ध्रुव हैं, विषय हैं, इस कारण तपस्वी महामुनि सन्त आप का ध्यान करते हैं। 'जगजीवन के मन भायक हो' संसारी प्राणी जब दुखी होता है तब आपकी ही पुकार करता है। आपका नाम स्मरण करने से ही असाता का रस सूखकर सातारूप परिणत हो जाता है। प्रभु आप सबके मनभावन हो। 'जय रिद्धि सुसिद्धि बढ़ायक हो' आप सुखकारक आत्मकल्याणक, भव्यों को मनवांछित सामग्री देनेवाले हैं। सिद्ध-परमेष्ठी इतने पवित्र हैं कि उनके नामस्मरण मात्र से ही जन्मजन्मान्तर के पापकर्म तड़ातड़ टूट जाते है। एक जीव जिस भूमि से मुक्त होता है उस भूमि के दर्शन से ही इतना सातिशय पुण्यबंध होता है कि उसका वर्णन नहीं कर सकते। कवि ने कहा है-

कागज सब धरती करूँ, लेखनी सब बनराय।
सात समुद्र की मसि करूँ, प्रभु गुण लिखा न जाय॥

सारी पृथ्वी का कागज बनाओ, सारे वृक्षों की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलम बनाओ, सारे समुद्रों की स्याही बनाओ और सरस्वती को प्रभुगुण लिखने के लिए बिठाओ, कागज, कलम, स्याही समाप्त हो जायेंगे लेकिन सिद्धों के सुख का, गुणों का वर्णन पूरा नहीं होगा।

भीष्म पितामह जब युद्ध भूमि में मरणासन्न अवस्था में थे तब दो चारणऋद्धिधारी मुनीश्वर आते हैं, 'णमो सिद्धाणं' कहने को कहते हें जिसके प्रभाव से वे स्वर्ग में देव होते है। तीर्थंकर किसी के सामने झुकते नहीं हैं, लेकिन जब वैराग्य की धारा बहती है, दीक्षा के लिए उद्धत होते हैं उस समय ''नमः सिद्धेभ्यः'' कहकर सिद्ध भगवान् को साक्षी में रखकर ही दीक्षा लेते हैं। जैसे सूर्य उष्णता का और प्रकाश का उत्कृष्ट आधार है, समुद्र जल का उत्कृष्ट आधार है उसी प्रकार सिद्ध भगवान् आनन्द-सुख शान्ति के उत्कृष्ट आधार हैं।

एक मुख में एक जीभ होती है, उससे कोई काम नहीं चल सकता इसीलिए एक मुख में अनन्त जीभ लगाओ, ऐसे अनन्त मुख बनाओं और उससे सिद्धों के एक समय के सुख का अनन्तवाँ भाग लो तो भी वर्णन नहीं होगा। तीन लोक तीन काल के पूरे शब्दों को एकत्रित करो, उसे भी अनंतानंत गुणा कर लो, इधर सिद्धों के एक समय के सुख का अनन्तवाँ भाग लो, वर्णन करने से पूरी शब्दराशि समाप्त हो जायेगी लेकिन सुख का वर्णन नहीं हो पायेगा, उसे तो मात्र केवली ही जान सकते हैं। क्योंकि शब्द सीमित हैं, और सीमित शब्द असीमित, अतीन्द्रिय सुख का वर्णन नहीं कर सकते।

तिर्यंच से मनुष्य सुखी है। मनुष्यों से राजा, राजा से महाराजा, उससे अधिक अर्द्धचक्रवर्ती, जघन्य भोगभूमि के जीव, मध्यम भोगभूमिवाले, उत्कृष्ट भोगभूमिवाले देव, इन्द्र १६ स्वर्ग, नौ ग्रैवेयक, ९ अनुदिश, ५ पंचोत्तर वाले क्रमशः अधिक-अधिक सुखी हैं। उसमें भी सर्वार्थसिद्धिवाले देव अधिक सुखी हैं। सभी सर्वार्थसिद्धि वाले देवों के सुख को भी अनंत से गुणा करो तो भी सिद्धों के सुख की बराबरी नहीं हो सकती। क्योंकि वह अतीन्द्रिय, सहज, अव्याबाध, आत्मिक स्वाधीन हैं शेष सब इन्द्रियजन्य, क्षणिक विनाशी पराधीन सुखाभास ही हैं। ऐसे सुख को कैसे प्राप्त करें? कोई मजदूर कावटिका द्वारा निरन्तर बोझा ढ़ोता है और उससे रहित होने पर सुखी होता है। ऐसे ही संसारी जीव काय की कावटिका से अनंत दुःखों के कारण कर्मरूपी बोझ को लेकर नाना गतियों में लिये-लिये फिरता है। परिणामतः दुःखों को भोगता है।

इस प्रकर सिद्धों का सुख अनुपम है, अलौकिक है, उसका वर्णन नहीं हो सकता। वे इतने पवित्र हैं कि उनके नाम लेने मात्र से ही जन्मजन्मान्तर के पाप कर्म दूर हो जाते हैं।

जिन्हें सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति हो गई है ऐसे अनन्तसुख के धारी अनन्तानन्त सिद्ध-परमात्मा हो गये हैं, हो रहे हैं और होंगे, उनको मेरा मन-वचन-काय से, अत्यंत भक्तिभावना से, सबको एक साथ व प्रत्येक को अलग-अलग नमस्कार हो।

'वात्सल्यरत्नाकर' (खण्ड २) से साभार

नागपुर में पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव

महाराष्ट्र की धरती पर प्रथम बार संत शिरोमणि आचार्य विद्यासागर जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में बृहद पैमाने पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव का आयोजन तुलसीनगर नागपुर में दिनांक ३ दिसम्बर से ९ दिसम्बर तक नवनिर्मित भव्य जिनालय के प्रांगण 'विद्याधाम' में सम्पन्न होगा।

आचार्य विद्यासागर जी एवं संघस्थ ३८ साधुओं का दिनांक १५ नवम्बर के पश्चात् नागपुर आगमन होगा। ऐसी जानकारी प्रचारप्रमुख 'महेन्द्र जैन रूपाली' एवं डॉ० संतोष मोदी ने दी है। ब्रह्मचारी श्री विनय भैया के मार्गदर्शन एवं दि. जैन परवारपुरा मंदिर ट्रस्ट के सान्निध्य में यह आयोजन सम्पन्न होगा।

महेन्द्र जैन ''रूपाली'' मो. 9822061288

पाठशाला शिक्षक दक्षता संवर्द्धन शिविर

धर्मोदय परीक्षा बोर्ड, सागर द्वारा 21 सितम्बर से 28 दिसम्बर तक के प्रत्येक रविवार को पाठशाला के शिक्षकों को शिक्षण कला में दक्ष करने के लिए 'शिक्षक दक्षता संवर्द्धन शिविर' का आयोजन आसपास की 5-7 पाठशालाओं का समूह बनाकर दोपहर 11 बजे से 5 बजे तक किया जायेगा। इस शिविर में जो भी शिक्षक भाग लेना चाहें, वे निम्न नम्बर पर संपर्क कर तारीख तय करें।

संपर्क सूत्र- ब्र० भरत जैन
रजिस्ट्रार धर्मोदय परीक्षा बोर्ड, सागर
मो. 9424951771

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भवनत्रिक देव जिनभक्तों का सम्मान करते हैं या उपकार?

पं. सुनीलकुमार शास्त्री

विगत वर्षों में उपर्युक्त विषय पर बहुत से लेख एवं पुस्तिकाएँ दृष्टिगोचर हुई हैं। शास्त्रीय प्रमाणों के अनुसार तो यह भली प्रकार सिद्ध है कि जिनभक्तों पर जब-जब कष्ट आए हैं, तब-तब चतुर्थ काल एवं पंचम काल में भक्तों के द्वारा, जिनेन्द्र प्रभु की भक्ति या स्मरण करने पर, देवों ने उनके संकट दूर करके उनका सम्मान किया है।

प्रथमानुयोग के ग्रन्थों में ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं। इन ग्रन्थों में एक भी उदाहरण ऐसा देखने को नहीं मिलता कि भक्तों ने भवनत्रिक देवों की पूजा-भक्ति की हो और देवों ने उन भक्तों पर उपकार करते हुए, उनका कष्ट दूर कर दिया हो। यद्यपि यह सत्य है, फिर भी जैनसमाज का एक वर्ग अभी भी भवनत्रिक देवों की पूजा-अर्चना-आरती इस आशय से करता हुआ देखा जाता है कि ये भवनत्रिक देव हमको सांसारिक-सुख प्रदान कर हम पर उपकार कर दें।

कई माह पूर्व पद्मावती के उपकार संबंधी लेख कुछ पत्रिकाओं में पढ़ने को मिले। उन लेखों को जब आगम के परिप्रेक्ष्य में देखा गया, तो उनको लेखक के मन की नितान्त कल्पना रूप पाया गया। उन लेखों में शास्त्रीय उद्धरण तो दिये गए, परन्तु उन उद्धरणों में पद्मावती का नाम (मूल ग्रंथ में) कहीं भी पढ़ने को नहीं मिला। लेखक ने आग्रहग्रस्त होकर शास्त्रों में उल्लेख न होने पर भी पद्मावती का नाम जोड़ दिया, क्योंकि उनको पद्मावती का उपकार दिखाना था। जैनसमाज भोली है, वह तो मात्र इतना देखती है कि किसी आचार्य ने शास्त्रीय उद्धरण देते हुए यदि कोई लेख लिखा है, तो वह प्रामाणिक ही होगा। वर्तमान में समाज में सारी गलत परम्पराएँ इसी आधार से विकसित होती चली जा रही हैं। १२वीं शताब्दी के बाद भट्टारककाल में भी भट्टारकों ने जैनसमाज को इसीलिए अज्ञानी बनाकर रखा ताकि समाज उनकी गलत परम्पराओं का विरोध न कर सके। वास्तविकता तो यह थी कि भगवान् पार्श्वनाथ पर जब कमठ के जीव ने उपसर्ग किया, तब ७ दिन बाद धरणेन्द्र ने उनके ऊपर फणाओं का समूह आवृत किया और उसकी पत्नी, मुनिराज पार्श्वनाथ एवं धरणेन्द्र के फणों के ऊपर वज्रमय छत्र तानकर स्थित हो गयी। (देखें उत्तरपुराण पर्व ७३/१३९-१४१) परन्तु 'प्राकृत विद्या' जनवरी-मार्च २००८ अंक के पृ. ६२ के अनुसार 'पद्मावती के मस्तक पर विराजमान भगवान् पार्श्वनाथ की प्रतिमाएँ १६वीं शताब्दी ईसवी के आसपास पंथव्यामोह के कारण बनना प्रारम्भ हो गईं जो गलत निरूपण था।' इससे पूर्व एलोरा आदि में जितनी भी उपसर्गसहित धरणेन्द्र-पद्मावती की मूर्तियाँ मिलती हैं, वे उपर्युक्त उत्तर-पुराण के उद्धरण के अनुसार ही मिलती रहीं। यह गलत परम्परा भट्टारकों के काल से प्रारंभ हुई। इसी प्रकार वर्तमान में पंथव्यामोह-पूर्वक भवनत्रिक देवों के उपकारों की जो चर्चा पढ़ने में आती है, वह भी अर्थ का अनर्थ मात्र ही है, रंच मात्र भी आगम सम्मत नहीं है। स्वाध्याय-प्रेमियों को चाहिए कि वे ऐसे लेखों को आगम के उद्धरण से मिलाते हुए पढ़ें।

एक लेख पिछले दिनों ऐसा भी पढ़ने में आया है, जिसका आशय है कि राजकुमार नमि-विनमि पर पद्मावती ने बड़ा उपकार किया। इस पूरे लेख में एक भी स्थान पर किसी शास्त्रीय उद्धरण में पद्मावती का नाम नहीं है, जबकि लेखक ने स्वेच्छा से लेख के शीर्षक में 'पद्मावती का उपकार' लिखा है। आश्चर्य तो यह है कि नमि और विनमि तो भगवान् आदिनाथ के काल में हुए थे (अर्थात् आज से लगभग एक कोड़ाकोड़ी सागर पूर्व) आदिपुराण के १८वें पर्व में इस प्रकरण में धरणेन्द्र का नामोल्लेख तो है, उनकी पत्नी या पद्मावती का उल्लेख ही नहीं है। फिर इस लेख में पद्मावती का नाम कहाँ से आ गया? दूसरे, धरणेन्द्र ने भी नमि और विनमि पर कोई उपकार नहीं किया, बल्कि उनको राज्य दिलाकर, राज्याभिषेकपूर्वक सम्मान किया। ऐसे भ्रमपूर्ण लेख को पढ़कर समाज गुमराह हो रहा है और समझ रहा है कि पद्मावती देवी ने ही राजकुमार नमि-विनमि पर उपकार किया था। वह पद्मावती वही थीं, जो आजकल भगवान् पार्श्वनाथ से संबंधित प्रचारित की जाती हैं। अतः यदि उनकी हम पर भी कृपा हो जाए, तो वह हमारे ऊपर भी उपकार करेंगी, यह बिलकुल गलत धारणा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसे ही एक लेख में ये शब्द भी पढ़ने में आये हैं–''ऐसे भव्य सम्यग्दृष्टि धरणेन्द्र एवं पद्मावती देव और देवी, समस्त तीर्थंकरों, आचार्यों, साधुओं एवं जिनशासन भक्तों पर सदा उपकार करते हैं।'' यह प्रकरण अत्यन्त विचारणीय है। धरणेन्द्र के द्वारा भगवान् पार्श्वनाथ का संकट दूर करना, उसके द्वारा भगवान् पर उपकार माना जाए या सेवा। क्या ये भवनत्रिक देव तीर्थंकरों या आचार्यों पर उपकार कर सकते हैं? कभी नहीं कर सकते। ये तो उनके किंकर हैं।

इस प्रकरण में निम्नलिखित बातें हमेशा याद रखने योग्य हैं–

१. यदि भगवान् पार्श्वनाथ का उपसर्ग दूर करने के कारण हम धरणेन्द्र-पद्मावती की पूजा करते हैं, तो क्या समाधिगुप्त और त्रिगुप्त नामक मुनिराजों पर शेर के द्वारा आक्रमण करने पर एक सूकर के द्वारा मुनिराजों की रक्षा करने के कारण, उस सूकर को भी पूज्य नहीं मानना पड़ेगा?

२. कुछ मूर्तियों में भगवान् पार्श्वनाथ के चरणों के नीचे जो धरणेन्द्र-पद्मावती दिखाये जाते हैं, वे इस बात के परिचायक हैं कि वे भगवान् के सेवक हैं। इस अंकन के कारण उनमें पूज्यता नहीं बनती।

३. इन देवी-देवताओं की पूजा कुछ भी फल नहीं देती है। बृहद्द्रव्य-संग्रह गाथा ४१ की टीका में लिखा है कि 'जो जीव ख्याति, पूजा, लाभ, रूप, लावण्य, सौभाग्य, पुत्र, स्त्री, राज्य आदि वैभव के लिए राग-द्वेष से आहत, आर्त्त और रौद्र परिणामवाले क्षेत्रपाल, चण्डिका आदि मिथ्या देवों की आराधना करते हैं, उसे देवमूढ़ता कहते हैं।' वे देव कुछ भी फल नहीं देते।

४. **कुच्छियदेवं धम्मं कुच्छियलिंगं च वंदए जो दु।**
लज्जाभयगारवदो, मिच्छादिट्ठी हवे सो हु॥
मोक्षपाहुड़ ९२।

अर्थ- जो सूर्य, चन्द्र, यक्ष आदि खोटे देवों की, खोटे धर्म व खोटे लिंग की वंदना नमस्कार या अभिवादन, लज्जा, भय या गारव से करता है, वह मिथ्यादृष्टि होता है।

श्री कार्तिकेयानुप्रेक्षा में इस प्रकार कहा है–

एवं पेच्छंतो विहु गह-भूय-पिसाय-जोइणी-जक्खं।
सरणं मण्णइ मूढो, सुगाढ-मिच्छत्त भावादो॥ २७॥

अर्थ- ऐसा देखते हुए भी मूढ़ जीव प्रबल मिथ्यात्व के प्रभाव से ग्रह, भूत, पिशाच, योगिनी और यक्ष को शरण मानता है।

उपर्युक्त आगमप्रमाणों से स्पष्ट है कि धरणेन्द्र, पद्मावती, क्षेत्रपाल आदि किसी भी जीव पर उपकार नहीं करते। स्वयं जीव का यदि सातावेदनीय का उदय हो, तब ही ये सहायता करते हुए देखे जाते हैं। इन देवी-देवताओं की पूजा-आरती तो महान् मिथ्यात्व का कारण है, अतः सांसारिक सुखों के लिए भी इनकी आराधना करना उचित नहीं। जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति तो सातिशय पुण्यबंध में कारण होती हुई, समस्त सांसारिक सुख को तो प्रदान करती ही है, परम्परा से मोक्षप्राप्ति में भी कारण है। हमको बड़े भाग्य से महान् दुर्लभ मनुष्य-पर्याय और दिगम्बर जैन-कुल में जन्म मिला है, हम सबको चाहिए कि उपर्युक्त भ्रमपूर्ण लेखों को पढ़कर भ्रमित न हों और जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति को ही परम उपादेय मानकर अन्य देवी-देवताओं की पूजा, आरती, भक्ति से दूर रहें। यह भी ध्यान रखें कि यदि अपने सिर पर भगवान् पार्श्वनाथ की मूर्ति रखी हुई पद्मावती देवी की मूर्ति है, तो वह भी पूजनीय नहीं है। इन मूर्तियों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा नहीं होती। भगवान् पार्श्वनाथ की पूजा के बहाने इनकी पूजा, आरती कभी न करें।

इस लेख का आशय यह कदापि नहीं है कि धरणेन्द्र, पद्मावती आदि का अनादर, तिरस्कार, अवहेलना या अपमान किया जाए। ये कदाचित् सम्यग्दृष्टि हो सकते हैं, अतः असंयतसम्यग्दृष्टि के साथ किया जानेवाला व्यवहार 'जय जिनेन्द्र' तक किया जा सकता है।

सिकन्दरा, आगरा, उ.प्र.

कबीरवाणी

दोष पराया देख करि चले हसन्त हसन्त।
अपना याद न आवई, जाका आदि न अन्त॥
तिनका कबहुँ न निंदिये पाँव तले जो होय।
कबहुँ उड़ि आँखों पड़ै, पीर धनेरी होय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म हमारे विधाता नहीं

सुमतचन्द्र दिवाकर

अनादिकाल से जीव के साथ कर्म का बन्धन सतत चला आ रहा है। यह 'केर' और 'बेर' की तरह वैचित्र्यपूर्ण है। इसे यह अनन्तचतुष्टय का धनी आत्मा सदैव से निर्वाह करता चला आ रहा है और भ्रमवश कर्मों को अपना विधाता मान बैठा है। दो भिन्न लक्षणोंवाले द्रव्यों में इस प्रकार की मैत्री का क्या कारण है? जीवात्मा चैतन्यलक्षणवाला है, जब कि कर्म अचेतन हैं। आत्मा अरूपी है। कर्म स्पर्श, रूप, रस गंधवर्णमय पुद्गल द्रव्य के रूपान्तरण हैं। तिस पर भी ये जड़ कर्म चेतन को अनादि काल से भटका रहे हैं, ऐसी हमारी एकान्त मान्यता है। इस प्रकार की मान्यता के कारण ही हम कर्मों को अपना विधाता मानते हैं। वस्तुतः कर्म हमारे विधाता नहीं, अपितु कर्मों के विधाता हम स्वयं हैं। हमारे सांसारिक भटकाव में कर्मों की सीमाएँ हैं। यदि कर्म ही नियामक होते, तो मुक्ति का मार्ग ही न निकलता। जैनदर्शन में नर से नारायण जीव स्वयं के पुरुषार्थ से बनता है। प्रत्येक आत्मा में ऐसी सामर्थ्य है कि बाँधे हुए कर्मों के फल देने की शक्ति आदि में परिवर्तन कर सकता है। इस प्रक्रिया को जैनदर्शन के कर्मसिद्धान्त में अपकर्षण, उत्कर्षण, संक्रमण, उदीरण आदि नामों से परिभाषित किया गया है। कर्मबंध से प्रारम्भ कर उनसे मुक्ति अथवा छुटकारे का पथ जैनागम के आलोक में उजागर करना इस आलेख का मंगल मन्तव्य है।

कर्म और कर्मबंध- मन वाणी और शरीर की प्रवृत्ति से कर्म आकृष्ट होते हैं। आगम की भाषा में इसे योग कहते हैं। चेतना की विकारी तंरगों को अथवा मानसिक विकारों को कषाय कहते हैं। चेतना में राग द्वेष रूप प्रदूषण अज्ञान अवस्था में सदैव उत्पन्न होता रहता है। इस प्रकार योग से कर्म आते रहते हैं और कषायों का सहयोग पाकर निरन्तर बँधते रहते हैं। देह है, तब तक बंध है। शुभभाव और शुभक्रिया होगी तो पुण्य बँधेगा, अशुभभाव और अशुभक्रिया होगी तो पाप बँधेगा। यह स्वयं के पुरुषार्थ पर निर्भर है कि शुभ बाँधना है कि अशुभ। कतिपय लोग कहने लगते हैं कि बंधन तो बंधन है, चाहे पुण्यरूप हो अथवा पापरूप। सामान्यतः कथन सही है, परन्तु पुण्य और पाप बंधन में बहुत अन्तर है। पुण्य की परिभाषा है **'पुनाति पुण्यं'**, जो आत्मा को ऊँचाइयों की ओर ले जाये उसे पुण्य कहते हैं। इसके विपरीत जो आत्मा को अधोगति की ओर ले जाये उसे पाप कहते हैं। पुण्य आत्मसाधना की ऊचाइयाँ पाते हुए स्वयमेव छूटता जाता है, जब कि पाप प्रयासपूर्वक छोड़ना होता है। पुण्य, बंध का कारण होने पर भी, मोक्ष मार्ग में सहायक है।

इस प्रकार रागद्वेषमोह की पृष्ठभूमि में भावकर्म, द्रव्यकर्म तथा नोकर्मों का अर्जन चलता रहता है। इस आगमन में विगत में बाँधे कर्मों की प्रबल भूमिका, आत्मा का वर्तमान का विपरीत पुरुषार्थ तथा कर्मबंध तथा कर्मफल व्यवस्था की अज्ञानता है। यदि कर्मबंध के यथार्थ कारणों का ज्ञान तथा आत्मशक्ति का सम्यक् भान हो जाये, तो यह धारणा निर्मूल हो जायेगी कि कर्म हमारे विधाता हैं। इस जीव के संसारभ्रमण का कारण मूलतः इसके रागद्वेषपरिणाम हैं। हम पूजा में पढ़ते भी हैं कि-

जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मैं रागद्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी॥

यह मानना कि चेतन आत्मा को अचेतन कर्म संसार-परिभ्रमण कराते हैं, मेरी अज्ञानता थी। अब समझ पाया कि मेरे भटकाव का कारण राग-द्वेष के वशीभूत परपदार्थों की ओर मेरा झुकाव है। मैं सदैव विपरीत पुरुषार्थ करता रहा। आत्मा का स्वरूप जैसा है उसे वैसा ही न जानना-मानना उस से भिन्न जानना-मानना ही उसका विपरीत पुरुषार्थ है।

मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन॥

मिथ्या श्रद्धा के वश शरीर और उससे सम्बन्धित समस्त संसार को आत्मवत् जानकर अनेक कामनाओं को जन्म दिया और उनकी पूर्ति हेतु अनेक पाप, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील सेवन करता हुआ कर्मों की खेती करता रहा और अपने विपरीत परिणमन को जड़ कर्म के माथे मड़ता रहा। राग-द्वेष कर भावकर्म अर्जित किये तथा मन-वचन-काय की क्रियाओं से द्रव्यकर्म का कोष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बढ़ाया। जब पूर्व अर्जित कर्म पक कर फल देने लगते हैं, तो उनके खट्टे-मीठे स्वाद से प्रभावित जीव नये कर्मकोष का सृजन कर लेता है। इस प्रकार यह प्रक्रिया अनादि से सतत चली आ रही हे। तिस पर भी कर्म विधाता नहीं, क्योंकि अनन्त जन्मों में बाँधे कर्मों को मुनिराज अपनी ध्यानाग्नि से जलाकर कुछ ही पलों में भस्म कर देते हैं।

कर्मों का स्वरूप तथा प्रारब्ध- कर्मों से छुटकारा पाने के लिये कर्मों के स्वरूप और उनके द्वारा फल देने की व्यवस्था को समझना आवश्यक है। बँधनेवाले सभी कर्मों को मुख्य आठ नामों से जाना जाता है। अपने नाम के अनुरूप ही प्रत्येक कर्म का कार्य है। जैसे ज्ञानावरण हमारे आत्मा के ज्ञानगुण को, दर्शनावरण दर्शनगुण को, अन्तराय वीर्यगुण को आच्छादित कर देते हैं, मोहनीय कर्म इस प्रगट सीमित ज्ञान को विकृत करने का कार्य करता है। इन चारों को घातिया कर्म भी कहा जाता है, क्योंकि ये अपने नाम के अनुरूप हमारी ज्ञानादि आत्मिक शक्तियों का घात करते हैं। शेष चार अघातिया कर्मों से शरीर का आकार-प्रकार, रूप-रंग आदि मिलता है, ऊँच-नीच कुल मिलता है। सुखदुख का वेदन होता है, आयु का नियमन होता है। इन्हें अपने-अपने कार्य के अनुरूप क्रमशः नाम गोत्र, वेदनीय तथा आयु कर्म कहा जाता है।

घातिया कर्मों को जीव के अनुजीवी गुणों को प्रभावित करनेवाला भी कहते हैं। जीव के ज्ञानदर्शन आदि अनुजीवी गुण हैं। ये गुण जीव की शाश्वत निजी सम्पत्ति हैं। इन गुणों को घातिया कर्म सर्वथा नष्ट नहीं कर पाते, परन्तु उनके प्रगटीकरण की शक्ति को सीमित कर देते हैं। मोहनीय कर्म सब कर्मों का राजा कहा जाता है। क्योंकि यह तत्त्वों की विपरीत श्रद्धा कराता है। इष्टोपदेश में आचार्य पूज्यपाद ने मोहनीय कर्म की तुलना मादक कोदों से करते हुए कहा कि जैसे इस प्रकार के कोदों को खाने से जीव हिताहित को भूलकर गाफिल हो जाता है, उसी प्रकार मोहकर्मरूपी मद्यपान से अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त नहीं हो पाता।

मोहेन संवृतं ज्ञानं, स्वभावं लभते न हि।
मत्तः पुमान्पदार्थानां यथा मदनकोद्रवैः॥

प्रारब्ध- जो हमने भूतकाल में किया था, वही संस्कार रूप हमारे वर्तमान में प्रारब्ध है। जो हमारा प्रारब्ध है, उसको भोगने की व्यवस्था ही कर्मफल-व्यवस्था है। जैसा हम बोते हैं, वैसा ही काटना होता है। नीम बोकर किशमिश नहीं पायी जा सकती, यह सामान्य और सर्वमान्य सिद्धान्त है। गीता में कृष्ण ने भी इसी प्रकार की उद्घोषणा की है कि कर्मों के फल का निर्धारण ईश्वर या अन्य कोई नहीं करता, अपितु स्वयं के द्वारा किये कृत्यों के अनुसार ही फल प्राप्त होता है। कृत्यों का निर्णय भी ईश्वर नहीं करता-

न कर्त्तव्यं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः
न कर्मफल संयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते॥ ५/१४॥

कर्मों की फल देने में पराधीनता- उपर्युक्त सामान्य नियम के अन्तर्गत अनेक उदाहरण आगम में पढ़ने, सुनने में आते हैं। कर्मों की तीव्रता के आवेग में श्री राम जैसे महापुरुष क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वन-वन भटकते हुए पेड़पौधों से सीता का पता पूछते हैं। पाण्डव से श्रेष्ठ पुरुष वनकंदराओं में छुपते दर-दर घूमते हुए समय व्यतीत करते हैं। यह सब कर्म की उदयावस्था के चित्र हैं। जब कर्म पक कर उदय को प्राप्त हो जाते हैं, तब उनका फल भोगना ही होता है। समतापूर्वक भोगनेवाले नये कर्मों के अर्जन से बच सकते हैं। हायतोबा करनेवाले नये कर्मों का सृजन-संग्रहण कर कर्मों की शृंखला सतत बनाये रहते हैं। समतावान् पुराने कर्ज की तरह चुका कर उदय में आये कर्म को भोग कर उससे रीत जाते हैं। जो कर्म अभी भी सत्ता में रहते हैं, उनमें परिवर्तन किया जा सकता है। फल देने की शक्ति को घटाया बढ़ाया जा सकता है। उनके फल देने के स्थितिकाल को घटाया बढ़ाया जा सकता है। असातावेदनीय कर्मको साता वेदनीय में रूपान्तरित कर भोगा जा सकता है। क्रोध के उदय को लोभरूप में भोगते हुए देखा जाता है। ग्राहक सौदा खरीदने के पश्चात् दूकानदार से कहता है कि सेठजी आपने हमें आज लूट लिया, ऐसा सुनकर भी दूकानदार यह नहीं कहता कि अपना माल उधार दे रहा हूँ, तुझे चाय पानी पिला रहा हूँ, तेरे बाप का क्या लूट लिया? क्योंकि नजर में बिके माल से मिलनेवाला मुनाफा दिखायी दे रहा है। क्रोध के उदय को लोभरूप में भोगने का पुरुषार्थ करने की क्षमता जीव में है। मन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में क्रोध आने पर भी उसे दबाकर ग्राहक से हँसकर यही कहता है- भैया मेरी तो यही खेती है, फिर भी आपको सबसे कम भाव लगाया है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया को जैनागम के कर्मसिद्धान्त की भाषा में उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण, उदीरणा आदि दश भागों में बाँटकर समझाया गया है।

कर्म से छुटकारा- सम्यक् पुरुषार्थ से हम कर्मों से छुटकारा भी पा सकते हैं। कर्मों से मुक्ति का नाम ही मोक्ष है। अगणित जीवों ने अनादि कर्मों से स्वपुरुषार्थ द्वारा छुटकारा प्राप्त किया है, कर्मों की कृपा से नहीं। अस्तु कर्म विधाता नहीं, जीव स्वयं अपना विधाता है।

सन्त कर्मोदय में रागद्वेष से अप्रभावित रहने का, आत्मा का पुरुषार्थ जाग्रत कर मोक्षमार्ग पा जाते हैं। कर्मसत्ता में उनके भी हैं और उदय में भी आते हैं परन्तु वे समता परिणाम बनाये रहते हैं। उन्हें वे द्रष्टा भाव से भोगते हैं, रागद्वेषपूर्वक नहीं। इसलिये उनकी कर्मों की शृंखला टूटती जाती है। नवीन कर्मबन्ध नहीं होता। पुराने हर्षपूर्वक भोगते हुए समतावान् बने रहते हैं। आत्मानन्द में जीते हुए त्रिकाल की चिन्ता, भय से मुक्त रहते हैं। कर्म उनके आगे अपने घुटने टेक देते हैं। ऐसे ही सन्तों को लक्ष्य कर आचार्य अमितगति ने योगसार ग्रंथ में उनकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि वे सन्त धन्य हैं, जो भवबीजरूप मिथ्यादर्शन के अभाव में, कर्म भोगने में द्वेषभाव न रखते हुए, कर्मों से छुटकारा पाकर, अपना कल्याण कर लेते हैं-

नास्ति येषामयं तत्र भवबीज-वियोगतः।
तेऽपि धन्या महात्मनः कल्याणफलभागिनः॥ २४०॥

पुष्पराज कॉलोनी,
गली नं. २, सतना (म.प्र.)

श्रीमती सुशीला पाटनी 'श्राविका शिरोमणि' अलंकरण से अलंकृत

अ.भा. श्री दिगम्बर जैन ज्ञानोदय तीर्थ क्षेत्र नारेली-अजमेर (राज.) की पावन धरा पर अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला महासमिति का दिनांक 4-5 अक्टूबर 2008 को महासम्मेलन सम्पन्न हुआ।

दिनांक 4 अक्टूबर को अजमेर किशनगढ़ सम्भाग के आह्वान पर ज्ञानोदय तीर्थ क्षेत्र में प्रथम बार महासमिति का महाअधिवेशन किया गया।

इस महासम्मेलन में 20 सम्भागों की लगभग 1000 महिला सदस्यों ने इस अधिवेशन में सक्रिय भाग लिया।

प्रत्येक सम्भाग की अध्यक्ष एवं मंत्री आदि ने स्टेज पर संकल्प किया कि समाजोत्थान हेतु परिवारों में चल रही कुरीतियों का बहिष्कार करेंगीं।

श्रीमती सुशीला जी पाटनी धर्मपत्नी विश्वविख्यात जैनगौरव श्री अशोक जी पाटनी, आर.के. मार्वल परिवार का इस शुभावसर पर अभिनन्दन किया गया। रजतपत्र पर स्वर्णाक्षरों से अंकित अभिनन्दन पत्र का वाचन श्रीमती डॉ. वन्दना जैन जयपुर ने किया। श्रीमती सुशीलाजी पाटनी को श्राविकाशिरोमणि के अलंकार से अलंकृत करते हुए उपस्थित जनसमुदाय ने अपने आपको गौरवान्वित अनुभव किया। लगभग 20 सम्भागों की अध्यक्ष महिलाओं ने माल्यार्पण कर श्रीमती पाटनी को सम्मानित किया।

श्रीमती शान्ता पाटनी धर्मपत्नी श्री सुरेशजी पाटनी आर.के. मार्वल परिवार ने अपने उद्गार प्रकट करते हुए कहा कि ऐसी आदर्श जेठानी सभी को मिले। सम्मान की शृंखला में श्रीमती शुचि धर्मपत्नी विनीत पाटनी पुत्रवधु श्रीमती सुशीला पाटनी ने कहा कि ऐसी सरलस्वभावी सुसंस्कारित सास सभी को मिले। जो अपने मृदुल व्यवहार से हम सब को एकता के सूत्र में बाँधे हुए हैं।

परम पूज्य मुनि पुंगव 108 श्री सुधासागर जी महाराज ने विशाल जन समुदाय के समक्ष अत्यंत मार्मिक एवं महत्त्वपूर्ण रविवारीय प्रवचन में कहा कि नारी ही अपने त्याग, सेवा, सद्व्यवहार से देश, समाज एवं परिवार में अलख जगा सकती है। आज के इस चकाचौंधपूर्ण भौतिकवाद के वातावरण में एकमात्र महिला ही एक ऐसी कड़ी है जो स्वयं के संस्कारों से कुरुतियों एवं कुसंस्कारों को बदल सकती है। अतएव धार्मिक संस्कारों को बढ़ाने में अपने परिवार में अधिक से अधिक योगदान देने का संकल्प करें।

भीकमचंद पाटनी, सं. सचिव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाकाहारियों को परोसा जा रहा है मांसाहार, शाकाहारी पदार्थों में चरबी, अण्डे, मछली की मिलावट

कैसी विडम्बना है यह....? बाजार में खाना और चटकारें उड़ाना आज फैशन हो गया है। लुभावनें विज्ञापन और चटपटे स्वाद के पीछे हमारी दीवानगी कहीं हमें शाकाहार से मांसाहार की ओर तो नहीं ले जार रही है। यह चिंतन-मनन आज सर्वाधिक जरूरी है, क्योंकि पैसों के लोभ और अधिक मुनाफा कमाने की होड़ में भक्ष-अभक्ष्य का बिना ध्यान रखे देश के कई रेस्टोरेंट और भोजनालय शाकाहारी भोज में मांसाहारी वस्तुओं का प्रयोग कर रहे हैं। कुछ दिनों पहले मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, मुम्बई, दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर पड़े पुलिस के छापे तथा फूड एण्ड ड्रग विभाग द्वारा सील की गई फैक्ट्रियों से कई होश उड़ानेवाले तथ्य उजागर हुए हैं। किस तरह चल रही है भारतीय बाजार में यह घुसपैठ और धर्मभ्रष्ट करने की मुहिम आइए जैनसमाचार दर्शन, पुने में प्रकाशित दिनांक १०.१०.०७ के प्रेरक लेख- शाकाहारियों को परोसा जा रहा है मांसाहार के माध्यम से ध्यान में लेते हैं ओर जैन होने के नाते संकल्प करते हैं कि हम बाजारों में चटकारे उड़ाने से बचेंगे तथा प्रत्येक वस्तु के उपयोग से पहले उस संदर्भ से अच्छे से तहकीकात, जानकारी, गवेषणा करेंगे तथा अपने धर्म-संस्कारों को जीवित रखने का प्रयास करेंगे। वस्तुतः बदलते इस दौर में आज हमें अपने खान-पान पर ध्यान देना एवं विचार करना सर्वाधिक आवश्यक है, क्योंकि जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन।

प्राणीमित्र नितेश नागौता, भवानीमण्डी

नई दिल्ली। हाल ही में मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, मुंबई, दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर पड़े पुलिस के छापे तथा फूड एण्ड ड्रग विभाग ने सील की गई फैक्ट्रियों से कई होश उड़ानेवाले तथ्य उजागर किए हैं। शादी में, होटलों में तथा कई सार्वजनिक उत्सवों में हो रहे भोज में मांसाहार परोसा जा रहा है। शाकाहारी व्यक्ति अनजाने में खुले आम मांसाहार कर रहा है, जिससे जैनसमाज में सनसनी फैल गई है। स्वाद के नाम पर धर्मभ्रष्टता के साथ कई बीमारियाँ घर कर रही हैं।

अहिंसाप्रेमी एवं शाकाहारियों की दशकों पुरानी माँग पर सकारात्मक निर्णय कर केन्द्र सरकार द्वारा पैकेज फूड प्रॉडक्ट पर शाकाहारी एवं मांसाहारी पदार्थ दर्शक हरा एवं लाल निशान लगाना कुछ वर्षों पूर्व अनिवार्य किया गया, किन्तु उसे सुकून अथवा निश्चितता के बदले शाकाहारियों के लिए परेशानियाँ अधिक बढ़ गई। इस कानून का अमल कराने के लिए जिम्मेदार अधिकारी-वर्ग रिश्वत खोरी की मोटी-तगड़ी रकम के ऐवज में कानून की खामियों से रास्ता निकालकर फूड कंपनियों को हरा निशान आवंटित कर राष्ट्र की आँखों में धूल झोंक रहे है।

अनेक फूड प्रॉडक्ट्स में विशेष कर बेकरी उत्पादन, पेय पदार्थ आदि में इमल्सीफायर, स्टॅबिलायइर्स कंडीशनर्स, ॲसिडीटी, रेग्युलेटर्स, प्रिझरवेटीव्हज, ॲटीऑक्सहडंट, थिकनरर्स, जिलेटीन, स्विटनर्स, कलर्स, फ्लेवर्स आदि शीर्षक मात्र दिएं जाते हैं। यूरोप में ई नंबर्स की सख्ती के बाद भारत में भी इन उत्पादों पर नम्बर छापने लगे हैं, किन्तु वे पूरी तरह भ्रमित करनेवाले हैं। कंपनियाँ इनमे मिश्रण के लिए आवश्यक पदार्थ यहाँ भारत से न खरीदकर विदेशों से सीधे आयात कर लेते हैं। तभी तो अनेक शाकाहारी, किन्तु प्रयुक्त लगभग सभी अंतर घटक मांसाहारी ही हैं। ऐसे में हरे निशान की आड़ में केंद्र सरकार, अन्न-प्रक्रिया-मंत्रालय शाकाहारियों को मांसाहार सेवन कराने का घृणित एवं जघन्य कार्य करवा रहा हैं, यह पूरे देश के लिए लज्जा और शर्म का विषय है। विश्व समुदाय के सन्मुख साख घटाने और प्रतिमा मलीन करने जैसा मामला है।

फिटा ऑईल से विटामिन ए, मांस, अंडा, कोचेनिअल बीअल से प्राप्त रंग व्हेल के सिर से प्राप्त स्पर्म ऑईल, सूअर, गाय, कुत्ता, बंदरों की हत्या से प्राप्त ॲनिमल फैट इत्यादि पदार्थ खुले आम उक्त शीर्षकों के नाम की आड़ में हरे निशानेवाले फूड प्रॉडक्ट्स में प्रयुक्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो रहे हैं। जिसकी त्वरित एवं गहन जाँच होकर स्थिति स्पष्ट होना अत्यंत आवश्यक है। उदाहरण के तौर मॅग्गी फूड प्रॉडक्ट्स, ॲपी फि, कोल्ड्रींक, बिटानिया मिल्क बिक्कीज, मेरी गोल्ड, टायगर, गुड डे, पारले जी, मोनॅको, हाईड एन्ड सिक, च्युईंगम, बबल गम, पोलो मिन्ट, अनेक चॉकलेट्स, टूथपेस्ट, पिज्जा, बर्गर, चिप्स, वनस्पति घी, बेकिंग पावडर, चायनीज डिशेस में प्रयुक्त अजीनोमोटो सॉस आदि जैसे अनेक पदार्थ हैं, जिसमें उपर्युक्त में से प्राणीजन्य पदार्थों से बने ॲडिक्टिव्हज् सरेआम मिलाए जाते हैं।

विश्वसनीय स्त्रोतों से ज्ञात हुआ है। इसी संदर्भ में गत दिनों २४ लोकसभा सांसदों द्वारा उठाए गए मुद्दों की जाँच से क्या निष्कर्ष निकले, क्या कार्यवाई की गई और भविष्य के लिए क्या उपाय किए जा रहे हैं, इस पर राष्ट्रीय स्तर पर बहस एवं चर्चा की आवश्यकता है। देशी घी (गावराणी घी), बटर उत्पादक फैक्ट्रियों में फूड एण्ड ड्रग विभाग ने डाले छापों में कई तथ्य उजागर किए हैं। बटर एवं देशी घी में गाय की एवं सूअर की चर्बी मिलाई जाती है, जिससे चिकनाई बढ़ती है। वनस्पति घी में गाय की चरबी, छाछ तथा सेंट डालकर गर्म किया जाता है और देशी घी (शुद्ध घी) के नाम पर बेचा जाता है। आज बाजार में उपलब्ध देशी घी और बटर शुद्ध नहीं है। कई होटलों में नान, पराठा, कूलचा में चर्बी मिश्रित किया जाता है। चायनीज फूड में ९० प्रतिशत मांसाहार मिश्रित पदार्थ होते हैं। कुछ दिनों पूर्व मॅकडोनाल्ड में बिक रहे बर्गर, पिज्जा, वड़ापाव में गाय की चर्बी पाई गई जिससे शिवसेना ने मॅकडोनाल्ड के कई शोरूम तोड़ डाले।

आज जैनसमाज में शादी, सगाई तथा म.सा. के चातुर्मास तथा अन्य धार्मिक, सामाजिक कार्यक्रम में बड़े-बड़े केटरर्स बुलाए जाते हैं। यही केटरर्स हमें मांसाहार करा रहे हैं। रेडीमेड ग्रेवी में कई कंपनियाँ मांसाहार का मिश्रण करती हैं। कई पेस्ट में , मछली का तेल मिश्रित हो रहा है, फिर भी हमारे जैनभाई अनजाने में मांसाहार मिश्रित खाना खा रहे हैं। रिलायन्स जैसी कम्पनी मांसाहार के हजारों पदार्थ से युक्त नॉनवेज मॉल खोलने जा रही है। अण्डे, मछली का प्रयोग खुलेआम हो रहा है। कई विदेशी कम्पनिओं द्वारा बच्चों के दूध पावडर में मूर्गे का चिकन पावडर मिश्रित किया जा रहा है। भारत सरकार द्वारा वेज पदार्थों पर हरे रंग का तथा नॉनवेज पदार्थों पर लाल रंग का निशान लगाना बंधन कारक किया गया है। फिर भी सरेआम कानून की धज्जियाँ उड़ाई जा रही हैं। भ्रष्ट अफसरों की वजह से सरेआम मांसाहार, शाकाहारियों के पेट में जा रहा है। इंडिया टी.वी., जी.टी.वी. तथा अन्य टी.वी. चैनलों पर आ रही खबरें तथा पुलिस, फूड एण्ड ड्रग्ज विभाग द्वारा डाले गए छापों में उजागर हुई जानकारी से रोंगटे खड़े हो रहे हैं। इस संदर्भ में सुशील टांटीया ने सरकार को निवेदन दिए हैं। पूणे में चंद्रजित विजयजी म.सा. ने समाज को अपने व्याख्यान में कई बार आगाह किया है।

आज बाजार में मिल रहे ९० प्रतिशत बटर एवं देशी घी मे मिलावट आ रही है। सफेद सूअर की चरबी, गाय की चरबी तो खुलेआम मिलाई जा रही है और स्वाद के नाम पर आँख मूँदकर मांसाहार कर रहे हैं। शादियों में, धार्मिक कार्यक्रमों में तथा सार्वजनिक भोज के नाम पर खुलेआम मांसाहार मिश्रित पदार्थों का उपयोग हो रहा है। फिर भी हम धर्मभ्रष्ट करनेवाले एवं पाप के भागीदार बनानेवाले अन्न को ग्रहण कर रहे हैं। इस संदर्भ में पाठक अपनी प्रतिक्रिया जैनम् जयति शासनम् कार्यालय पर भेज सकते हैं।

प्रेषक-निर्मलकुमार पाटोदी, इन्दौर
'जैनं जयति शासनम्' इन्दौर से साभार

श्री सेवायतन होम्योपैथिक दवाखाने से हजारों लोग लाभान्वित

पवित्र तीर्थ स्थल श्रीसम्मेद शिखर जी में स्व. श्री कन्हैयालाल जी सेठी (जशपुर नगर) की स्मृति में उनके सुपुत्र श्री प्रकाश चन्द्र सेठी राँची के सहयोग से श्रीसेवायतन संस्थान मधुबन द्वारा संचालित हौम्योपैथिक दवाखाने से हजारों लोग लाभान्वित हुए हैं।

इसका संचालन संस्थान के मानद अध्यक्ष श्री एम.पी. अजमेरा के मार्गदर्शन में भारत सरकार के प्रतिष्ठान भारत अल्युमिनीयम कम्पनी के सेवानिवृत्त कार्यालय प्रबंधक डॉ० महेन्द्र कुमार जैन द्वारा सेवाभाव से चिकित्सा कार्य किया जा रहा है।

विमल सेठी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

प्रश्नकर्त्ता- पं० आशीष शास्त्री, शाहगढ़।

जिज्ञासा- क्या एक साथ दो संस्थानों का उदय सम्भव है?

समाधान- वर्तमान में हम देखते हैं कि एक ही व्यक्ति बौना भी दिखाई देता है और कुबड़ा भी। उसको देखकर मन में विचार होना स्वाभाविक है कि इसके वामन एवं कुब्जक इन दोनों संस्थानों का उदय दिखाई देता है। परन्तु जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश भाग-१, पृष्ठ-३९० (क्र. ४) पर दिए गये, नामकर्म-उदयस्थान-प्ररूपणाओं में इसप्रकार कहा गया है- तीन शरीर (औदारिक वैक्रियिक तथा आहारक), ६ संस्थान, प्रत्येक-साधारण इन तीन समूहों की ११ प्रकृतियों में से प्रत्येक समूह की कोई १-१ करके युगपत् तीन का ही उदय होता है।' अर्थात् एक जीव के एक समय में एक ही संस्थान का उदय होता है, दो का नहीं। ऐसा नियम है।

जिज्ञासा- पुराण कितने प्रकार के होते हैं?

समाधान- उपर्युक्त प्रश्न के समाधान में श्री धवला १/११३ में इसप्रकार कहा गया है-

"जिनेन्द्र भगवान् ने जगत् में १२ प्रकार के पुराणों का उपदेश दिया है। वे समस्त पुराण जिनवंश और राजवंशों का वर्णन करते हैं। पहला अरिहन्त (तीर्थंकरों) का, दूसरा चक्रवर्तियों का, तीसरा विद्याधरों का, चौथा नारायण-प्रतिनारायणों का, पाँचवाँ चारणों का (चारण ऋद्धिधारी मुनिराजों का) छठा श्रमणों का वंश है। सातवाँ कुरुवंश, आठवाँ हरिवंश, नवाँ इक्ष्वाकु वंश, दसवाँ काश्यप वंश, ग्यारहवाँ वादियों का वंश और बारहवाँ नाथवंश।"

प्रश्नकर्त्ता- कु. चन्द्रिका जैन, सहारनपुर।

जिज्ञासा- विस्रसोपचय क्या होता है?

समाधान- विस्रसोपचय के सम्बन्ध में श्री धवला पु. १४, पृ. ४३० पर इस प्रकार कहा है-"प्रश्न-विस्रसोपचय किसकी संज्ञा है? उत्तर- पाँच शरीरों के परमाणु पुद्गलों के मध्य जो पुद्गल स्निग्ध आदि गुणों के कारण उन पाँच शरीरों के पुद्गलों में लगे हुए हैं, उनकी विस्रसोपचय संज्ञा है। उन विस्रसोपचयों के सम्बन्ध का पाँच शरीर के परमाणु पुद्गल-गत स्निग्ध आदि गुणरूप जो कारण हैं, उसकी भी विस्रसोपचय संज्ञा है, क्योंकि यहाँ कारण में कार्य का उपचार किया है।

श्री जीवकाण्ड गाथा-२४९ में इसप्रकार कहा है-

जीवादोणंतगुणा पडिपरमाणुम्हि विस्ससोपचया।
जीवेण य समवेदा एक्केक्कं पडि समाणा हु॥

गाथार्थ- (कर्म और नोकर्म के) प्रत्येक परमाणु पर जीवराशि से अनन्तगुणे विस्रसोपचय हैं, वे जीव के साथ समवेत हैं। एक-एक के प्रति समान हैं॥ २४९॥

भावार्थ- कर्म तथा नोकर्म के जितने परमाणु जीव के प्रदेशों के साथ बद्ध हैं, उनमें से एक-एक परमाणु पर जीवराशि से अनन्तानन्त गुणे विस्रसोपचय रूप परमाणु जीवप्रदेशों के साथ एक क्षेत्रावगाही रूप से (अगले समयों में, कर्म और नोकर्म रूप परिणमन के उम्मीदवार स्वरूप) स्थित हैं। ये परमाणु, आत्मापरिणाम की अपेक्षा न रखते हुए, अपने स्वभाव से ही, मिलते हैं। वे अनन्तानन्त परमाणु विस्रसोपचय कहलाते हैं। ये कर्म व नोकर्म रूप से परिणमन किए बिना उनके साथ स्निग्ध व रूक्ष गुण के द्वारा एक स्कन्ध रूप होकर रहते हैं। इन परमाणुओं के समूह को विस्रसोपचय कहा जाता है। जिस प्रदेश पर जो जीव स्थित है, वहाँ स्थित जो पुद्गल हैं, वे ही मिथ्यात्व आदि कारणों से, आत्मा के साथ बन्ध को प्राप्त होते हैं।

जिज्ञासा- तीनों लोकों में स्थित समस्त परमाणु स्कन्ध बन चुके हैं, या कुछ परमाणु ऐसे भी हैं, जो आज तक स्कन्ध नहीं बने हैं?

समाधान- पुद्गल की स्वभावद्रव्यपर्याय परमाणु रूप है। श्री राजवार्तिक अध्याय-५, सूत्र २५ की टीका में इसप्रकार कहा गया है-'**न चानादि परमाणुर्नाम कश्चिदस्ति।**' अर्थ- अनादिकाल से अब तक परमाणु की अवस्था में ही रहनेवाला कोई अणु नहीं है।

इस प्रमाण से यह स्पष्ट है कि ऐसा कोई भी शुद्ध पुद्गल परमाणु नहीं है, जो अनादि से शुद्ध ही हो और आगे भी अनन्त काल तक शुद्ध रहेगा। परन्तु श्लोकवार्तिक के भाषा टीकाकार पं० माणिकचन्द्र जी कौन्देय न्यायाचार्य का मत इससे भिन्न है। उन्होंने **तत्त्वार्थ-श्लोकवार्तिक** भाग-२, पृ. १७३ पर भाषाटीका में इसप्रकार कहा है-'अनन्तानन्त परमाणु ऐसे हैं, जो अभी तक स्कन्ध अवस्था में प्राप्त नहीं हुए हैं, वे अनादि से परमाणु रूप हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्नकर्त्ता- राजीव जैन अमरपाटन।

जिज्ञासा- विग्रहगति में पिछले भव की आयु तथा गति रहती है या अगले भव की?

समाधान- मान लो कि किसी एक जीव ने जो मनुष्य था, मनुष्यपर्याय छोड़कर, अगली देवपर्याय पाने के लिये गमन किया तब, जब तक मनुष्य आयु तथा मनुष्य गति का उदय है, तब तक वह जीव, मनुष्य पर्याय को नहीं छोड़ता है। मनुष्य आयु के अन्तिम निषेक उदय के उपरान्त ही वह जीव मनुष्य पर्याय छोड़कर विग्रहगति में प्रवेश करता है और विग्रहगति के प्रथम समय से ही देवगति एवं देवायु का उदय प्रारम्भ हो जाता है। कर्मकाण्ड गाथा २८५ में इसप्रकार कहा गया है-

गदि आणुआउउदओ सपदे भूपुण्णबादरे ताओ।
उच्चुदओ णरदेवे थीणतिगुदओ णरे तिरिये॥

अर्थ- किसी भी विवक्षित भव के प्रथम समय में ही, उस विवक्षित भव के योग्य गति-आनुपूर्वी और आयु का उदय होता है। तथा 'सपदे' कहने से एक जीव के एक ही गति आनपूर्वी तथा आयु का उदय युगपत होता है।

इस प्रकार विग्रहगति के प्रथम समय से ही, प्राप्त होनेवाली अगली पर्याय सम्बन्धी गति व आयु का उदय मानना चाहिए।

जिज्ञासा- सच्चे देव-शास्त्र और गुरु में, किसको बड़ा मानना चाहिए या तीनों को समान मानना चाहिए?

समाधान- उपर्युक्त प्रश्न का समाधान, विभिन्न दृष्टियों से विभिन्न प्रकार का हो सकता है। जैसे कोई कहता है कि सबसे बड़े तो अरिहन्त देव ही हैं, क्योंकि यदि उनकी वाणी न खिरती, तो जिनवाणी का उद्गम कैसे होता और यदि जिनवाणी का उद्गम न होता, तो मुनिराज, मुनि के योग्य आचरण का अध्ययन और पालन कैसे करते। इसीलिए तो सभी जैनबन्धु सर्वप्रथम 'देव शास्त्र-गुरु' पूजा नित्य प्रातःकाल करते हैं। इसमें भी इसी अपेक्षा से क्रम रखा गया है।

अन्य दृष्टि के अनुसार तीनों को समान भी कहा गया है। जैसा कि पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका १/६८ में इस प्रकार कहा है-

संप्रत्यस्ति न केवली किल कलौ त्रैलोक्यचूडामणि,
स्तद्वाचः परमासतेऽत्र भरतक्षेत्रे जगद्द्योतिकाः।
सद्रत्नत्रयधारिणो यतिवरास्तेषां समालम्बनं,
तत्पूजा जिनवाचिपूजनमतः साक्षाज्जिनः पूजितः॥६८॥

अर्थ- वर्तमान में इस कलिकाल में तीन लोक के पूज्य केवली भगवान् इस भरतक्षेत्र में साक्षात् नहीं हैं, तथापि समस्त भरतक्षेत्र में जगत्प्रकाशिनी केवली भगवान् की वाणी मौजूद है तथा उस वाणी के आधार-स्तम्भ श्रेष्ठ रत्नत्रयधारी मुनि भी हैं। इसलिए इन मुनियों का पूजन तो सरस्वती का पूजन है तथा सरस्वती का पूजन साक्षात् केवली भगवान् का पूजन है।

सागारधर्मामृत में पं० आशाधर जी ने इसप्रकार कहा हैं-

ये यजन्ते श्रुतं भक्त्या ते यजन्तेऽञ्जसा जिनम्।
न किञ्चिदन्तरं प्राहुराप्ता हि श्रुतदेवयोः॥ ४४॥

भावार्थ- जो मानव भक्तिपूर्वक जिनवाणी की पूजा करते हैं, वे निश्चय से जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करते हैं। क्योंकि गणधरदेव ने जिनवाणी और जिनेन्द्रदेव में कुछ भी अन्तर नहीं कहा है। अर्थात् जो श्रुत है वह देव है, जो देव है वह श्रुत है।

श्री श्रुतसागर सूरि द्वारा लिखित निम्न श्लोक में, बोधपाहुड़ गाथा १६ की टीका में इसप्रकार कहा गया है-

ज्ञानकाण्डे क्रियाकाण्डे चातुर्वर्ण्यपुरःसरः।
सूरिर्देव इवाराध्यः संसाराब्धितरण्डकः॥

अर्थ- जो ज्ञानकाण्ड और क्रियाकाण्ड में शिक्षा और दीक्षा में ऋषि, यति, मुनि और अनगार इन चार प्रकार के मुनियों के अग्रसर हैं तथा संसाररूपी समुद्र से पार करने के लिये नौका के समान हैं, ऐसे आचार्य परमेष्ठी देव के समान आराधना करने के योग्य हैं।

उपर्युक्त प्रमाणानुसार कथंचित् देव, शास्त्र और गुरु को समान भी कहा जा सकता है।

जिज्ञासा- नरकगति के उदय से नारक पर्याय मिलती है या नरकायु के उदय से मिलती है?

समाधान- श्री धवला पु. १०, पृष्ठ २३९ में इस प्रकार कहा हैं- **'जिस्से गईए आउअं बद्धं तत्थेव णिच्छएण उपज्जति त्ति।'**

अर्थ- जिस गति की आयु बाँधी गई है, निश्चय से वहाँ ही उत्पन्न होता है।

यदि यहाँ कोई यह शंका करे कि नरकगति के उदय एवं सत्व के कारण नरक पर्याय मिलती है, तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनका यह कहना ठीक नहीं है। क्योंकि हम मनुष्यों के उदयावली में चारों गति का उदय रहता है, परन्तु मनुष्य गति के अलावा अन्य तीन गति नामकर्म की प्रकृतियाँ संक्रमित होकर मनुष्यगति रूप उदय में आती हैं। जहाँ तक नरक गति के सत्त्व का प्रश्न है, श्री धवला पु.१, पृष्ठ-३२४ पर इसप्रकार कहा गया है- 'नरक गति का सत्त्व भी (सम्यग्दृष्टि के) नरक में उत्पत्ति का कारण कहना ठीक नहीं है, क्योंकि नरकगति के सत्त्व के प्रति कोई विशेषता न होने से सभी पन्चेन्द्रियों की नरकगति का प्रसंग आ जायेगा। जैसे नित्यनिगोदिया जीवों के भी त्रसकर्म की सत्ता विद्यमान रहती है, इसलिए उनकी भी त्रसों में उत्पत्ति होने लगेगी।'

अतः जिस आयु का उदय होता है, उसी के अनुसार पर्याय मिलती है, ऐसा मानना ही आगमसम्मत है।

1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा (उ.प्र.)

बच्चे के जन्म दिन पर सेवायतन को सहयोग

आन्ध्रप्रदेश श्री सेवायतन समन्वय समिति हैदराबाद के प्रमुख श्री सुनील पहाड़े ने बताया कि कुमार अनन्त जैन सुपुत्र श्री सुजीत जैन छाबड़ा एवं अंजू छाबड़ा के जन्म दिन पर पारसनाथ क्षेत्र में ग्राम उत्थान के लिए कार्यरत श्रीसेवायतन संस्थान को 5100/- रूपयों सहयोग-स्वरूप दिये हैं। आन्ध्रप्रदेश श्री सेवायतन समन्वय समिति द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि मांगलिक अवसरों पर फिजूल खर्च न कर अपने पावन तीर्थ श्री सम्मेद शिखर जी क्षेत्र के 14 ग्रामों के ग्रामीणों के दुख-दर्द को दूर करने के लिये हमें यथासंभव सहयोग करना चाहिए। यह उल्लेखनीय है कि सेवाभावी एवं उच्च विचारों से सुसंस्कृत मनीपुर जैनपरिवार फर्म शिवकरण केशरीमल के श्री धन कुमार जी जैन छाबड़ा श्रीसेवायतन संस्थान के परम संरक्षक बनकर सेवा कार्यों को आगे बढ़ा रहे हैं। श्री सुजीत जैन छाबड़ा सम्प्रति श्री धन कुमार जी के सुपुत्र हैं।

विमल सेठी

श्री आर० के० दिवाकर भोपाल सेवायतन से जुड़े

श्री सेवायतन संस्थान, मुधबन पारसनाथ द्वारा चलाये जा रहे कतिपय ग्रामीण विकास एवं मानव-सेवा के कार्यों को स्वयं ग्रामों में जाकर उन्हें देखकर उपजे सेवाभाव से प्रभावित होकर श्री दिवाकर, जो मध्यप्रदेश सरकार में पुलिस महानिर्देशक के पद पर कार्यरत रहे हैं, वे 51000/- की राशि देकर श्री सेवायतन के आजीवन सदस्य बने हैं। उन्होंने अपने संबोधन में कहा कि इस पावन तीर्थ की रक्षा के लिए श्री सेवायतन मील का पत्थर साबित होगा। उन्होंने श्री अजमेरा से कदम से कदम मिलाकर इन पुनीत कार्यों में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। श्री अजमेरा ने उन्हें मध्यप्रदेश श्री सेवायतन समन्वय समिति के प्रमुख के रूप में सेवायें देने एवं मध्यप्रदेश में श्री सेवायतन संगठन को और अधिक व्यापक बनाने के लिए अनुरोध किया। श्री दिवाकर एवं उनकी धर्मपत्नी ने कहा कि ऐसा कार्य हमने 50 वर्ष पहले प्रारंभ किया होता, तो यहाँ की छटा कुछ और ही होती। श्री दिवाकर एवं उनके साथ भोपाल से पधारे अनेक लोगों ने गया में मुनि श्री प्रमाणसागर जी के दर्शन किये तथा आशीर्वाद लिया एवं आचार्य विद्यासागर जी के आशीर्वाद एवं मुनि श्री प्रमाणसागर जी की प्रेरणा से स्थापित श्री सेवायतन संस्थान के प्रति विशेष आदर सर्मपित किया।

विमल सेठी
प्रचार मंत्री श्रीसेवायतन
मधुबन, पारसनाथ (गिरिडीह)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ-समीक्षा

दिगम्बर जैन मुनि

सुरेश जैन 'सरल'

पुस्तक का नाम : दिगम्बर जैन मुनि। **ग्रंथकर्ता**-पू. मुनिश्री 108 समतासागर जी महाराज (गुरु : राष्ट्रसंत आचार्यप्रवर श्री 108 विद्यासागर जी महाराज)। **प्रकाशक** : श्री प्रेमचंद प्रमोदकुमार जैन, महावीर मार्ग, बड़ौत (बागपत) उ.प्र.। **पृ. संख्या** : 68। **मूल्य** - स्वाध्याय

आज हमारा प्रगतिशील समाज स्वादिष्ट भोजन प्रदाय करनेवाले अनेक होटलों के नाम जानता है, किन्तु उत्तम पाठन-सामग्री देनेवाले ग्रंथों के नहीं, जब नाम ही नहीं जानता तो पढ़ेगा क्या? प्रस्तुत पुस्तक एक नामवर होटल से अधिक मायने रखती है और जो जिन्स (आयटम) प्रदाय करती है वे पाठक के मन और मस्तिष्क को स्थायी महत्त्व की संतुष्टि देते हैं।

समाज जिन महान् दिगम्बर-भेष-धारी साधुओं के दर्शन करने अनेक कष्ट उठाकर जाता आता रहता है, उनके विषय की अनेक जानकारियों से वह जीवन भर अछूता रहता है। ऐसे समर्पित धर्मज्ञों के लिए पू. मुनि समतासागर जी ने इस कृति के माध्यम से दिगम्बर-मुनि के परिचय और चर्या को पारदर्शी बना दिया है।

पहले वे कथन करते हैं कि विभिन्न मतों में दिगम्बरत्व को भरपूर महत्त्व दिया गया है, चाहे ग्रंथराज महाभारत देखें, चाहे वैराग्य शतक (भर्तृहरि), चाहे गुरुग्रंथ साहिब और चाहे बाईबिल। सभी अपने अपने स्तर से प्रतिसाद देते मिले हैं। मुनिवर ने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भी दिगम्बर जैनमुनियों के प्रवास और विहार पर प्रकाश डाला है और स्पष्ट किया है कि मौर्य-सम्राटों, सम्राट सिकंदर, बादशाह सेल्यूकस, सम्राट सम्पति, बादशाह आंगष्टस, सम्राट खारवेल, से लेकर प्रजा-सम्राट महात्मागाँधी तक ने जैनसंतों के अस्तित्व को स्वीकार किया है और उनसे शिक्षायें ग्रहण की हैं।

प.पू. समतासागर जी ने एक स्थल पर स्पष्ट किया है कि सन् 1938 के आसपास भारत के दक्षिणी भू-भाग निजाम राज्य में दिगम्बरत्व पर बंदिश लगाने का प्रयास किया गया था, जिसे प.पू. आचार्य शांतिसागर जी महाराज की प्रेरणा से समाप्त किया गया था।

समतासागर जी लिखते हैं कि वर्तमान आचार्य, राष्ट्रसंत, गुरुदेव श्री विद्यासागर जी महाराज आगम के धरातल पर, सर्वोदयी भावना से अनुप्राणित हो जिनशासन की प्रभावना और अहिंसा तथा जीवदया की जादुई-बाँसुरी बजा रहे हैं। वे महावीरत्व के प्रमुख लोक चेतनावाही प्रतापी सैनिक हैं। हैं नूतन महावीर।

दिगम्बरत्व और जैन मुनिचर्या पर समतासागर जी ने सरल भाषा में भ्रमनाशक 17 बिन्दुओं पर सुंदर चर्चा की है जिसमें मुनि के विहार, प्रवास, केशलौंच, दिगम्बरत्व अपरिग्रह आदि पर प्रेरक सामग्री है। मुनियों के 28 मूलगुणों का आगमोचित्त कथन, पहले संस्कृत में, फिर हिन्दी में प्रस्तुत करते हुए पाँच महाव्रतों, पाँच समितियों, पाँच इंद्रियों का निमंत्रण छः आवश्यक और सात विशेष गुणों का वर्णन आत्मसात करने योग्य है। अन्यगुणों का कथन करनेवाला स्थल (पृ. 34) बार-बार मननीय है।

मुनि की नग्नता का कारण जानने के लिए यह पुस्तक आईना का कार्य करती है, फिर खड़े होकर भोजन, केशलोंच का अभिप्राय, अस्नान, व्रत की वैज्ञानिकता, प्रासुक जल और प्रासुक भोजन पर प्रकाश डाला गया है। दिगम्बर मुनि के उपकरणों का परिचय, आहारचर्या का अनुशासन मुनिदीक्षा से पूर्व की जानेवाली साधना, दीक्षा की प्रक्रिया को शोधपरक दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। दिगम्बर जैनसाधु की तीन श्रेणियों और प्रायश्चित विधि गुरु-शिष्य और श्रावक को पठनीय है। यह पुस्तक जैनधर्म में स्त्री-सन्यास का रहस्य खोलती है और उनके निवास-प्रवास का ज्ञान भी कराती है।

मुनि जीवन का चरम सल्लेखना-व्रत पर पूरा होना, समाधि लेना और देह का अग्निसंस्कार करना भी संकलन में जानने को मिलता है। जैनमुनि अपनी साधना से समाज और राष्ट्र को जो मौन योगदान देते हैं, वह किसने देखा? पृ. 58 पर दर्शाया गया है। अंत के पन्ने पर मुनि की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिनचर्या के रेखा-चित्र अबोले ही बहुत कुछ कह देते हैं।

पुस्तक मात्र पठनीय नहीं है, संग्रहणीय भी है। ऐसी पुस्तकें आड़े समय पर टार्च की तरह उपयोगी सिद्ध होती हैं। 13 जुलाई 62 को नन्हीं देवरी (म.प्र.) में जन्मे गुरुदेव श्री समतासागर जी महाराज ने मात्र 46 वर्ष की वय में अनेक सुंदर ग्रंथ लिखकर लोक को भेंट किये हैं। उनके सार्थक लेखन की तरह उनके बोधगम्य प्रवचन भी सभ्य-समाज में चर्चा बनाये रहते हैं। सच, वे दोनों जगह प्रवीण हैं। दोनों विधाओं का आचार्यत्व उनके भीतर पाल्थी मारकर बैठा हुआ है। हमें दर्शन भी हो रहे हैं। वे धन्य हैं। उन्हें नमन है।

405, गढ़ाफाटक, जबलपुर म.प्र.

गर्भपात के लिए माँ की अर्जी खारिज की बम्बई हाई कोर्ट ने

मुम्बई ५ अगस्त- ३७ वर्ष पुराने कानून के बंधन से मुक्ति पाने के लिए एक अर्जी लेकर निकिता मेहता मुम्बई हाईकोर्ट की शरण में गई थी। उन्होंने बताया कि उनके गर्भ में बढ़ रही २४ हप्ते की सन्तान के हृदय में जटिल खराबी है। उसे जन्म के पहले ही गर्भपात के द्वारा समाप्त करने की अनुमति दी जाए, किन्तु निकिता की वह अर्जी अदालत ने खारिज कर दी है। हाईकोर्ट ने बताया कि निकिता की गर्भजात सन्तान अस्वाभाविक अवस्था में जन्म लेगी इस बात का प्रमाण आवेदन करनेवाले नहीं दे पाये। इसलिए गर्भपात की अनुमति नहीं मिल सकती।

निकिता ने पति हर्ष मेहता और चिकित्सक निखिल दातार के साथ हाईकोर्ट में आवेदन किया था। इस निवेदन का आधार था चिकित्सा की रिपोर्ट। उन लोगों ने बताया था कि हृदय की खराबी लेकर ही शिशु जन्म लेगा। परन्तु उसके साथ ही एक और बात उन्होंने बताई थी कि जाँच के द्वारा जो तथ्य मिले हैं वे गर्भपात कराने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। रिपोर्ट के इस अंश को गम्भीरता के साथ अदालत ने देखा है इतना ही नहीं, उसी अस्पताल के अन्य एक दल चिकित्साकों के द्वारा परीक्षण कराया गया था। उन्होंने बताया है कि हृदय में दोष लेकर शिशु के जन्म लेने की सम्भावना 'नहीं के बराबर है।' दूसरी तरफ निकिता के लिए सहानुभूति दिखाते हुए भी केन्द्रिय स्वास्थ्यमंत्री आनबूमणि रामदास ने गर्भपात सम्बन्धित कानून में संशोधन की सम्भावना को भी समाप्त कर दिया है।

''वर्तमान'' बाँगला दैनिक ५.८.०८ से साभार
संकलन- सुशीलकाला, धुलियान, मुशीर्दाबाद,
अनुवाद - ब्र. शान्तिकुमार जैन

श्रमणपरम्परा में सम

सुमतचन्द्र दिवाकर

सम-समता, शम-शान्ति, श्रम में निहित तपस्या है,
स्वालम्बन, आत्मनिर्भरता और धर्म अहिंसा है।
बीज में, फूल, फल सम,
सम में सभी समाते हैं।
सम धारण कर ही, श्रमण संत,
सम्यक् भाव बढ़ाते हैं।
भेद और अभेद का समन्वय समाधान है,
महावीर का स्याद्वाद मंत्र
जिसमें समता प्राणवान् है।
रत्नत्रय आराधन, थुति उच्चारण
पापों का प्रक्षालन
स्वाध्याय अहं विसर्जन
जिनके जीवन की चर्या है
ज्ञान ध्यान तप में रत रहना
ऐसी श्रमण साधना है।
बाधाएँ आने पर भी
समताभाव बनाये रहना,
ऐसी श्रमण परम्परा है।

पुष्पराज कॉलोनी गली नं.२,
सतना (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

'मूकमाटी-मीमांसा' समालोचना-संग्रह-ग्रन्थ का लोकार्पण सम्पन्न

अंधकार दूर करेगी मूकमाटी : जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी

शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, रामटेक (नागपुर महाराष्ट्र), वर्षायोग हेतु चातुर्मासरत जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के ओजस्वी प्रवचनों से विगत दिवस गुँजायमान हो गया। आचार्यप्रवर के साप्ताहिक प्रवचन से पहले एक गरिमामय एवं भावपूर्ण समारोह में आचार्यश्री द्वारा लिखित कालजयी कृति 'मूकमाटी' महाकाव्य पर लिखित समालोचनात्मक आलेखों के संग्रह-ग्रन्थ 'मूकमाटी-मीमांसा' का लोकार्पण भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ।

आचार्यप्रवर एवं उनके संघस्थ ३७ तपस्वी मुनिजनों के सान्निध्य में रविवार, ५ अक्टूबर ०८ को सम्पन्न हुए इस विमोचनसमारोह में देश भर से बड़ी संख्या में उपस्थित हुए समालोचकों, मनीषी विद्वानों एवं श्रद्धालुजनों ने भी अपनी सहभागिता दर्ज कराई।

मूकमाटी-मीमांसा के लोकार्पण समारोह के अवसर पर पहुँचे अनेक शुभकामना सन्देशों में राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल, पूर्व उपराष्ट्रपति श्री भैरोंसिंह शेखावत, गृहमंत्री श्री शिवराज पाटिल एवं भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री राजनाथसिंह के सन्देश प्रमुख थे। राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज को धार्मिक सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति बताते हुए कहा कि उनकी धर्मसभाओं में धार्मिक मूल्यों के साथ-साथ राष्ट्रहित का भी सन्देश होता है। इस अवसर पर प्राप्त शुभकामना सन्देशों का वाचन पत्रकार अभिनन्दन साँधेलीय पाटन ने किया।

समारोह के मुख्य अतिथि सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री ओमप्रकाश जैन (सूरत), विशिष्ट अतिथि श्री प्रमोद सिंघई (कोयलावाले, नई दिल्ली) एवं कार्यक्रम के अध्यक्ष प्रभात जैन (कन्नौजवाले, मुंबई) से 'मूकमाटी मीमांसा' के तीनों खण्डों का क्रमशः विमोचन कराकर अतिथियों के साथ ही ग्रन्थ के संपादक आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी एवं प्रबन्ध संपादकों सुरेश सरल (जबलपुर), सन्तोष सिंघई (दमोह), नरेश दिवाकर, विधायक (सिवनी), सुभाष जैन (सागर) ने समुपस्थित समालोचकों के साथ लोकार्पित तीनों खण्डों की एक-एक प्रति आचार्यप्रवर के करकमलों में समर्पित की।

आतंकवाद, आरक्षण एवं दलित समस्याओं के समाधान तथा दहेजप्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों के निर्मूलन एवं व्यक्तित्व-विकास की प्रक्रिया के निर्धारण हेतु आचार्यप्रवर विद्यासागर जी ने 'मूकमाटी' महाकाव्य सृजित किया था। राष्ट्रभाषा में लिखित एवं सन् १९८८ में भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली से प्रकाशित कालजयी कृति 'मूकमाटी' पर देश-विदेश के विख्यात समीक्षकों ने कृतिकार की मान्यताओं एवं काव्य के वैशिष्ट्य का अपने वैचारिक आलोक में आलोडन-विलोडन कर, उसे आधुनिक भारतीय एवं हिन्दी काव्य साहित्य की अपूर्व उपलब्धि माना है। सन् २००६ तक आठ आवृत्तियों में प्रकाशित 'मूकमाटी महाकाव्य' के मराठी, अँग्रेजी, बाँग्ला, कन्नड़ तथा गुजराती में भी अनुवाद स्वरूप पाकर धर्म, दर्शन और अध्यात्म के सार के साथ ही साथ सामाजिक परिप्रेक्ष्य में सम-सामयिक समस्याओं के निवारण हेतु जनमानस दिशाबोध भी प्राप्त कर रहा है।

कार्यक्रम की प्रस्तावना में 'मूकमाटी-मीमांसा' ग्रन्थ के सम्पादक आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी (उज्जैन) ने कहा कि 'मूकमाटी' महाकाव्य संभवतः देश का ऐसा पहला ग्रन्थ होगा, जिस पर लगभग ३०० समीक्षकों के द्वारा समालोचनात्मक निबन्ध लिखे गए और वे एक साथ साहित्यजगत् को इन तीन खण्डों में समुपलब्ध हो रहे हैं। भारतीय ज्ञानपीठ (१८ इन्स्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड, नई दिल्ली-११०००३) से तीन खण्डों में प्रकाशित (प्रत्येक खण्ड में ६३७ पृष्ठीय सामग्री) हुए। इस ग्रन्थ के सम्पादन के लिए पहले साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सचिव डॉ. प्रभाकर माचवे, नई दिल्ली का चयन हुआ था। सम्पादन कार्य के ही दौरान अचानक उनके कालकवलित हो जाने पर इस कार्य हेतु मेरा चयन किया जाना मेरे लिए परम सौभाग्य की बात है। आचार्यश्री के 'मूकमाटी' सहित विपुल साहित्य पर देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत अब तक ४ डी.लिट्, २२ पी.एच.डी., ७ एम.फिल., २ एम.एड. तथा ६ एम.ए. के शोध प्रबन्धों का लिखा जाना उसके लोकव्यापीकरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का परिचायक है।

श्री त्रिपाठी ने कहा इस ग्रन्थ को साकार रूप देने में मुनि श्री अभयसागर जी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उन्होंने पुस्तक के हर पृष्ठ को बारीकी से पढ़ा, जाँचा है। उनकी आस्था और निष्ठा से ही यह ग्रन्थ पूर्ण हो सका है। इस ग्रन्थ में सभी समीक्षकों ने बहुत ही उत्तम रीति से अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं। परम्परा में सन्त, गुरु और आचार्यों से बड़ा कोई नहीं है। आचार्यप्रवर ने 'मूकमाटी' महाकाव्य में शास्त्रों की सभी मान्यताओं को मण्डित करके लोक को दिया है। इसे सभी पढ़ें और हमारे आसपास जो अन्धकार है, उसे दूर करें। समय के इस अन्धकार को दूर करने की क्षमता इन संतों में ही है। काव्य का उद्देश्य सदा लोक मंगल रहा है। इन्हीं उद्देश्यों को यह महाकाव्य पूरा करता है। सर्जना महान् होती है और उसके अपने निश्चित मानदण्ड होते हैं। किन्तु सर्जनात्मक प्रतिभाएँ रूढ़ियों का पालन नहीं करतीं, अपितु नई परम्पराएँ बनाती हैं।

प्रबन्ध-सम्पादकों की ओर से सुरेश सरल, पूर्व मानद जनसम्पर्क अधिकारी, आचार्य विद्यासागर शोध संस्थान, जबलपुर ने 'मूकमाटी-मीमांसा' ग्रंथ-प्रकाशन की दीर्घकालिक कार्य-योजना की अथ से इति तक पर प्रकाश डाला। भारतीय ज्ञानपीठ के प्रकाशन अधिकारी डॉ० गुलाबचन्द जैन ने 'मूकमाटी' महाकाव्य के सम्बन्ध में कहा कि इसमें आचार्यश्री ने लिखा है कि माटी मूक है, पद दलित है और आज तक दबती चली आ रही है। यदि कुम्भकार उस की ध्रुव, सत्ता को पहचाने, तो वह कुम्भ बन जाती है। बाद में अग्नि में उसे तपाया जाता है तब वह पैरों द्वारा कुचली गई माटी कुम्भ बन कर हमारे सिर पर आ जाती है।

इस कार्यक्रम के संचालक इंजी. रवि जैन, नागपुर, ने 'मूकमाटी-मीमांसा' के सम्पादकद्वय डॉ० प्रभाकर माचवे (मरणोपरांत), आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी, सम्पादन-सहायक त्रय-डॉ० आर० डी० मिश्र, डॉ० शकुन्तला चौरसिया, डॉ० सरला मिश्रा (सभी सागर), प्रबन्ध संपादक- सुरेश सरल, संतोष सिंघई, नरेश दिवाकर (डी.एन.) सुभाष जैन (खमरियावाले, सागर) के महती योगदान के लिए शाल, श्रीफल, सम्मानचिह्न आदि से सम्मानित किये जाने हेतु उनका आह्वान किया। समारोह में समुपस्थित समालोचक डॉ० जगमोहन मिश्र, डॉ० घनश्याम व्यास, डॉ० (मिस) पी०सी० साल्वे, डॉ० कुसुम पटोरिया, राजेन्द्र पटोरिया, कृष्णकुमार चौबे आदि के अतिरिक्त डॉ० गुलाबचन्द्र जैन, (नई दिल्ली) पत्रकार सुश्री शोभना जैन (नई दिल्ली), अभिनन्दन साँधेलीय (पाटन), आनन्द सिंघई (जबलपुर), दिलीप जैन गुड्डा (सागर), अभिषेक जैन (जबलपुर), इत्यादि के विशिष्ट सहयोग के लिए आयोजन समिति ने सभी का भावभीना सम्मान किया।

लोकार्पण समारोह के अन्त में आज के महत्त्वपूर्ण उद्बोधन में आचार्यश्री विद्यासागर जी ने कहा कि हमने भिन्न-भिन्न प्रकार के शरीर को ओढ़ रखा है और उसी के फलस्वरूप अपने आपको विभाजित कर रखा है। हम एक अखण्ड तत्त्व को भूलकर अनेकों में विचारों को बाँटते जा रहे हैं। दिव्य ज्ञान के माध्यम से सन्तों ने इस रहस्य को समझा है। कोई भी संसार में छोटा बड़ा नहीं, किन्तु एक भी नहीं हैं, हैं तो अनेक, अनेक रहेंगे, अनन्त रहेंगे, अजर रहेंगे, किन्तु इस विराटता का अनुभव संकुचित आँखों की दृष्टि से नहीं किया जा सकता है। ये चर्मचक्षु हमें केवल चर्म दिखाएँगे, धर्म नहीं। वहाँ तक केवल आस्था के मार्ग से ही पहुँच सकते हैं। उन्होंने कहा कि आस्था के लिए घण्टों की आवश्यकता नहीं। जिस चीज को हम पहचान नहीं पा रहे हैं, वह है अखण्ड तत्त्व। आँखे बन्द कर, अन्य इन्द्रियों को कुछ देर विश्राम देकर इस अखण्ड तत्त्व का अनुभव हम कर सकते हैं। हमारी परेशानी यह है कि हम एकान्त के समर्थक नहीं हैं और अनेकान्त से छूट नहीं पाते।

आपने कहा कि ज्ञान, विज्ञान और विवेक में बहुत अन्तर है। भिन्न-भिन्न दो वस्तुओं का नीरक्षीर-विश्लेषण करना विवेक है। विवेक के उपरान्त हमें रास्ता मिल जाता है। **'विवेक हो ये एक से, जीते जीव अनेक, अनेक दीपक जल रहे, प्रकाश देखो एक।'**

यानी जब प्रकाश की ओर देखते हैं, तो सर्वत्र प्रकाश नजर आता है, किन्तु ऊपर देखते हैं तो भिन्न-भिन्न बल्ब दिखाई देते हैं। जीव अनेक होने पर भी वे एक इसलिए हैं कि प्रत्येक के पास एक जैसा ही आत्म तत्त्व है। हम एक नहीं हैं, किन्तु एकसे हैं। अतः हम भी प्रभु बन सकते हैं। हम भगवान् नहीं हैं, किंतु भगवान् बन सकते हैं। इसके लिए बस प्रक्रिया अपना ली जाय तो काम हो जाएँगा। पर हमें खुद पर ही विश्वास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं है, आस्था नहीं है। मिट्टी के कण-कण में जीव हैं, पर उन्हें देखने के लिए आस्था की आवश्यकता है।

आचार्यश्री ने 'मूकमाटी' महाकाव्य (पृ. ३५२) की इन पंक्तियों के माध्यम से कहा, "संत-समागम की यही तो सार्थकता है/संसार का अन्त दिखने लगता है/समागम करनेवाला भले ही/तुरन्त सन्त-संयत/बने या न बने/इसमें कोई नियम नहीं हैं/किन्तु वह सन्तोषी बनता है।" इन पंक्तियों को सुन-समझकर व्यक्ति सन्त बने या न बने, सन्तोषी जरूर बन जाएगा। जिससे भगवान् बना जा सकता है वह कौन सा तत्त्व है, यह जानने भर की देर है, पर इसके लिए इशारा भी काफी है, अन्यथा सारा का सारा भी कम पड़ सकता/जाता है।

शरीर और आत्मा के भेद को स्पष्ट करते हुए आचार्यश्री ने कहा कि भले ही शरीर का परिचय उम्र से हो सकता है, पर आत्मा का नहीं। आत्मा की तो कोई उम्र नहीं होती। 'एज' और 'इमेज' से रहित यह आत्मतत्त्व है, जिसकी कोई न 'ड्रेस' है, न 'एड्रेस' है। आज जड़ तत्त्व से पूरा संसार प्रभावित है। इस कारण पैसे का महत्त्व इतना बढ़ रहा है कि शेष सब असहाय नजर आ रहे, लेकिन आत्मतत्त्व को जाननेवाला सन्तुष्ट हो जाता है। उसे संसार के किसी विकार से भय नहीं रहता। सन्तों के जीवन में ऐसा ही कुछ होता है। उनका समागम पाकर सही पुरुषार्थ करने का प्रयत्न करना चाहिए।

समाज में बढ़ती भोग-विलासिता पर चिंता व्यक्त करते हुए आचार्यश्री ने कहा कि भोग-विलासिताओं को हम अच्छा कहते हैं, किन्तु अच्छा तो वह है, जो इन्हें छोड़कर एकान्त पसन्द करता है। इसके लिए पूरी तरह 'मूकमाटी' पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। बहुत आसान इलाज है कि स्व-आत्मतत्त्व को पहचानें। इसके लिए भले ही सन्त नहीं बन सको, तो सन्तोषी अवश्य बनो। सन्तोषी बनने के बाद अधिक उपासना की आवश्यकता नहीं रहती।

आपने बताया कि सही तत्त्व वही है, जो विक्षेप से दूर रहता है। विक्षेप से युक्त तत्त्व भ्रान्तियुक्त रहता है। अतः जीवन की वास्तविकता समझो और सही प्रवासी बनो। निवासी या आवासी मत बनो। आपका परिचय कोई दूसरा दे या आप किसी का परिचय दें, यह ठीक नहीं है। स्वयं का प्रवचन स्वयं के लिए दें कि मैं यहाँ से आया हूँ और यहाँ जाऊँगा। अकेला ही आया था और अकेला ही जाना है, पर बीच में क्या-क्या किया, यह भूल जाते हैं।

घड़े का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि मूकमाटी से बना कुम्भ कहता है कि "**आग की नदी को पार करके आया हूँ/अब कौन सी परीक्षा लेना चाहते हो।**" प्रवासी हो, यात्रा के दौरान नदी पार करना है, तो घड़े का सहारा लो। वह तुम्हें डूबने नहीं देगा। लेकिन ध्यान रहे कि घड़ा खाली रहे, नहीं तो डूब जाओगे। ज्ञानी वह घड़ा है जो यह नदी पार करा सकता है, पर वह यदि खाली हो तो, अन्यथा यदि वह जड़त्त्व से भरा है, तो अपने साथ शिष्य को भी ले डूबेगा। अन्त में प्रवचन के सारांशभूत एक 'हाइकू' प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा, **'खाल मिली थी/यही मिट्टी में मिली/खाली जाता हूँ।'**

मूकमाटी-मीमांसा (तीन खण्ड), संपादक- डॉ. प्रभाकर माचवे एवं आचार्य राममूर्ति त्रिपाठी, प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ, १८ इन्स्टीट्युशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली-३, मूल्य ४५०/-, प्रत्येक खण्ड, तीनों खण्ड ११००/- पृष्ठ ६३७ प्रत्येक खण्ड में।

रामटेक (नागपुर, महाराष्ट्र) से प्राप्त

स्वभाव

एक बार आचार्य महाराज जी ने बताया कि पाठ करते समय मात्र पाठ (शब्दों) की ओर दृष्टि जाने पर लीनता नहीं आती है, बल्कि लीनता तो अर्थ की ओर जाने पर आती है। शिष्य ने कहा- लेकिन आचार्यश्री अर्थ की ओर चले जाते हैं, तो पाठ भूल जाते हैं। आचार्यश्री ने कहा- भूलना तो स्वभाव है। "जैसे ज्ञान आत्मा का स्वभाव है वैसे ही भूलना मनुष्य का स्वभाव है।" मनुष्य तो भूल का पुतला है। दूसरे शिष्य ने कहा- भूलता तो पागल है। आचार्यश्री बोले- यह भी एक भूल है, दूसरे को पागल कहना। भूल तो मात्र भगवान् से नहीं होती, बाकी सभी से होती है। अन्त में उन्होंने कहा- अनावश्यक को भूलना सीखो तो आवश्यक स्मरण में रहेगा। मनोरंजन में नहीं, आत्मरंजन में रहना सीखो।

मुनिश्री कुंथुसागरकृत 'संस्मरण' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैनाचार्यश्री विद्यानन्द जी महाराज के सान्निध्य में

कु. प्रणीता जैन को ऋषभदेव संगीत रत्न अवार्ड

जिनेन्द्र कला केन्द्र भीलवाड़ा द्वारा प्रतिभाओं को राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाश में लाने एवं प्रोत्साहित करने की योजनान्तर्गत प्रारम्भ किये गये भगवान् ऋषभदेव संगीत रत्न अवार्ड का प्रथम पुष्प देहली में कु. प्रणीता जैन को प्रदान किया गया जिसमें उसे सम्मान पट्ट व रुपया 5100/- भेंट किया गया।

ऋषभ विहार देहली में आचार्यश्री विद्यानन्द जी के सान्निध्य में दिनांक 8.10.08 को आयोजित इस विशिष्ट समारोह में राजस्थानी लोकचित्र शैली में प्रख्यात कलाकार पं० जोशी द्वारा श्री निहाल अजमेरा के मार्गदर्शन में चित्रित भगवान् ऋषभदेव की षट्कर्मों के उपदेश की फड़ पेन्टिंग का लोकापार्ण भी सम्पन्न हुआ। कु. प्रणीता का 201 मंगल कलश का योग भवाई नृत्य बहुत प्रभावी रहा।

समारोह का संचालन कुन्दकुन्द भारती के ट्रस्टी श्री सतीश जैन, आकाशवाणी ने किया एवं कला केन्द्र के सचिव श्री निहाल अजमेरा ने बताया कि अगले माह संस्था द्वारा घोषित कु० वीणा अजमेरा व डॉ० ज्योति जैन को ऋषभदेव संगीत पद्म अवार्ड, रूपये 11000/- व सम्मान पट्ट एवं श्रीमती डॉ० कुसुम शाह,डॉ० सुमन सोनी को संगीत रत्न अवार्ड नारेली तीर्थधाम में प्रदान किये जायेगे।

निहाल अजमेरा, सचिव

8 वाँ यंग जैन अवार्ड 2008, पदमपुरा जयपुर

मैत्री समूह के तत्त्वावधान में मुनिश्री क्षमासागर जी की प्रेरणा से 11 एवं 12 अक्टूबर 08 को धर्मस्थल के सुरेन्द्र कुमार जी हेगड़े तथा डॉ० कुसुम पटोरिया नागपुर के मुख्य आतिथ्य में उपाधि प्राप्त सीनियर अवार्डियों का दीक्षांत समारोह हुआ एवं शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोत्तम प्रदर्शन करनेवाली देशभर की कोई 500 प्रतिभाओं का सम्मान भी।

सर्वप्रथम कक्षा 10वीं एवं 12वीं की आल इण्डिया मेरिट में रेंक पानेवाली तेजस्वी प्रतिभाओं को विशेष रूप से ड्रेस कोड में सम्मानित किया गया। कक्षा 10वीं में आल इण्डिया मेरिट में छात्रों में पहला स्थान पाने वाले सुहास जैन बेंगलौर (97.90%) एवं छात्राओं में अदिति एन. मुदहोल्कर नवी मुम्बई (95.60%) के साथ-साथ कक्षा 10 वीं के कोई 200 मेघावी विद्यार्थियों का आत्मीय सम्मान किया गया। कक्षा 12वीं विज्ञान में स्पर्श सिंघई कानपुर ने 90% अंकों के साथ आई.आई.टी. जे.ई, ए.आई.ईईई में चयनित होकर देश की मेरिट (छात्रवर्ग) में प्रथम एवं कु. नेन्सी जैन दमोह (94%) अंकों के साथ (छात्रावर्ग) प्रथम पुरस्कृत हुई। इनके साथ ही इस कक्षा के कोई 60 छात्र-छात्राओं को भी सम्मानित किया गया। कक्षा 12वीं कामर्स में राहुल जैन अम्बाला 95.20% एवं कु नेन्सी नवलखा (90.22%) अंक एवं म.प्र. में पहली पोजीशन आल इण्डिया मेरिट में क्रमशः छात्र एवं छात्रावर्ग में प्रथम स्थान पाकर सम्मानित हुए। इसके साथ ही कामर्स के कोई 90 मेधावी विद्यार्थियों का भी सम्मान किया गया। उसी क्रम में 12वीं आर्ट्स के कोई 20 विद्याथियों एवं विशिष्ट उपलब्धि-वाली प्रतिभाओं को अतिथियों ने सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त जयपुर के मेघावी प्रतिभाओं को भी पृथक् से सम्मानित किया गया।

समाजसेवी एवं प्रमुख उद्योगपति श्री पी.एल. बैनाड़ा ने मैत्री समूह एवं यंग जैन अवार्ड का परिचय दिया। मुख्य अतिथि श्री सुरेन्द्र हेगड़े कनार्टक ने यंग जैन अवार्ड के अनुशासित व्यवस्थित एवं भव्य आयोजन की खुले मन से प्रशंसा कर अपने यहाँ प्रोफेशनल कॉलेजों में ऐसे अवार्डियों के लिए सीटें आरक्षित करने एवं हर संभव सहायता देने की बात कही। कार्यक्रम का सरस संचालन डॉ. सुमति प्रकाश जैन व श्री राजेश बड़कुल छतरपुर एवं श्रीमती आभा जैन जबलपुर ने किया।

दूसरे दिन के आयोजन के पहले सत्र में यंगजैन अवार्ड से पूर्व में सम्मानित हो चुकीं प्रतिभाओं को दीक्षांत समारोह में उपाधियाँ प्रदान की गईं। इस सत्र में डॉ० नलिन के. शास्त्री गया, ने 'मूल्य आधारित जीवन पद्धति' एवं डॉ. प्रतिभा जैन से.नि. विभागाध्यक्ष राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर ने 'जीवन में अहिंसा का महत्त्व' विषय पर सारगर्भित व्याख्यान दिया। मुनिश्री क्षमागार जी का संदेश श्री महावीर पाण्डया ने हिन्दी में एवं श्री एस.एल.जैन ने अंग्रेजी में सुनाया, जिससे वातावरण भावुक हो उठा, क्योंकि यह पहला अवसर था जब इस समारोह के प्रणेता मुनि श्री क्षमासागर जी सशरीर इस भव्य कार्यक्रम में उपस्थित नहीं थे, तब भी पूरे समारोह में हर वक्त, हर पल, हर कहीं उनकी अमूर्त उपस्थिति महसूस की जाती रही। मैत्री समूह का प्रत्येक सदस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनसे अदृश्य प्रेरणा व मनोबल पाकर प्रतिभाओं को सम्मानित करने की उनकी परिकल्पना को साकार करने में प्राणपन से जुटा रहा। कार्यक्रम का संचालन श्री राजेश बड़कुल छतरपुर, श्रीमती आभा जैन जबलपुर एवं श्रीमती मोना सोगानी जयपुर ने किया।

डॉ. सुमति प्रकाश जैन
बेनीगंज छत्तरपुर (म.प्र.)

पुरस्कार समर्पण समारोह

सराकोद्धारक संत उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी की प्रेरणा से स्थापित श्रुत संवर्द्धन संस्थान द्वारा प्रवर्तित "श्रुत संवर्द्धन-पुरस्कार एवं सराक पुरस्कार वर्ष 2007" का समर्पण समारोह तुकोगंज दिगम्बर जैनसमाज श्राविकाश्रम ट्रस्ट एवं चातुर्मास समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में सम्पन्न हुआ। जिसमें देश के पाँच मूर्धन्य विद्वानों को शाल, श्रीफल एवं सम्मान राशि भेंटकर सम्मानित किया गया वे हैं-

1. पं० श्री बालमुकुंद जी जैन शास्त्री, मुरैना (म.प्र.)- आचार्य शांतिसागर छाणी पुरस्कार।

2. डॉ० सनत कुमार जैन, जयपुर (राज.)- आचार्य सूर्यसागर स्मृति पुरस्कार।

3. डॉ० विजय कुमार जैन, लखनऊ (उ.प्र.)- आचार्य विमलसागर भिण्ड स्मृति पुरस्कार

4. डॉ० सुदर्शनलाल जैन, वाराणसी (उ.प्र.)- आचार्य सुमतिसागर स्मृति पुरस्कार।

5. डॉ० कु. मालती जैन मैनपुरी (उ.प्र.)- मुनि वर्द्धमानसागर स्मृति पुरस्कार।

साथ ही सराक पुरस्कार दिल्ली के संस्कृति संस्थान को दिया गया। सराक क्षेत्र में विशिष्ट सेवाओं के लिए उक्त संस्था के संरक्षक श्री अनिल जैन अध्यक्ष, श्री राकेश जैन एवं महामंत्री राकेश जैन को सम्मानित किया गया।

डॉ. सुशीला सालगिया

आचार्य ज्ञानसागर छात्रावास इन्दौर म.प्र. प्रवेश सूचना

परम पूज्य 108 आ. श्री विद्यासागरजी महाराज की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से सर सेठ सरुपचन्द्रजी हुकुमचन्द्र जी दिगम्बर जैन पारमार्थिक संस्था के अन्तर्गत आचार्य ज्ञानसागर जी छात्रावास का शुभारंभ 1 सितम्बर से हो चुका है।

बहुत समय से देखा जा रहा था कि मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र आदि के जो छात्र उच्च शिक्षा ग्रहण हेतु इन्दौर आते हैं, उनको उचित एवं शुद्ध भोजन व्यवस्था, आवास व्यवस्था एवं धार्मिक संस्कार देनेवाला कोई छात्रावास यहाँ नहीं था। अत: आचार्य ज्ञानसागर छात्रावास समिति ने उपर्युक्त संस्थान में चल रहे छात्रावास को अपनी व्यवस्था के अन्तर्गत लेते हुए एवं छात्रावास को आधुनिकतम सभी सुविधाओं से सुसज्जित करके, उच्च शिक्षा ग्रहण करने हेतु इन्दौर में रहनेवाले छात्रों के लिए छात्रावास दिनांक 1 सितम्बर 2008 से प्रारम्भ कर दिया है। वर्तमान में यहाँ 23 छात्र अध्ययनरत हैं। छात्रावास का शेष भाग भी नवम्बर तक सभी सुविधाओं से सुसज्जित हो जावेगा, जिसमें 30 छात्रों हेतु स्थान सुरक्षित है। अत: 1 जनवरी 2009 से हम 30 छात्रों को और प्रवेश दे सकेंगे।

जो दिगम्बर जैन छात्र 12वीं कक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं और जिनको इन्दौर में शिक्षा ग्रहण करनी हो, वे धार्मिक संस्कारों सहित आवास एवं भोजन व्यवस्था के लिए अपना आवेदन पत्र भेज सकते हैं।

प्रथम सत्र 2009 हेतु छात्रावास में प्रवेश के लिए 15 अक्टूबर से प्रवेश-पत्र आवंटित किये जा रहे हैं। शीघ्रातिशीघ्र आवेदन करनेवालों को प्राथमिकता दी जावेगी।

सभी सूचनाओं के लिए सम्पर्क करें-

पं० भरत शास्त्री (संचालक छात्रावास)
मो. 9406606591
आचार्य ज्ञानसागर छात्रावास, जवेरीबाग,
नसिया, इन्दौर (म.प्र.)

मुनि श्री प्रमाणसागर जी द्वारा रामायण-गीता ज्ञानवर्षा के माध्यम से गया नगर में अभूतपूर्व धर्म प्रभावना

गया, 19 अक्टू.08 संत शिरोमणि प.पू. आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महराज के परम प्रभावक शिष्य प.पू. मुनि श्री 108 प्रमाण सागर जी के अध्यात्मपरक प्रभावी प्रवचनों से दिनांक 15 अक्टूबर 08 से 19 अक्टूबर 08 तक रामायण-गीता ज्ञान वर्षा के पंच-दिवसीय कार्यक्रम द्वारा गया नगर में जैनधर्म, दिगम्बर संत एवं जैनसमाज की अभूत पूर्व धर्म प्रभावना हुई।

गया नगर के इतिहास में पहली बार नगर के प्रबुद्ध नागरिकों द्वारा गठित 'विश्वधर्म जागरण मंच' के द्वारा सार्वजनिक स्तर पर अजैन मंच से स्थानीय गया जिला स्कूल के विशाल मैदान में किसी जैनसंत का प्रवचन हुआ। प्रवचन के प्रथम दिन दस हजार की संख्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में जनसमुदाय मुनिश्री के प्रवचन के लिये एकत्रित हुई। पू. मुनिश्री के धारा प्रवाह अध्यात्मपरक प्रवचन से प्रभावित जनसमुदाय की संख्या दिनों दिन बढ़ती ही चली गई एवं दिनांक 19 अक्टूबर 08 को समापन के अवसर पर पच्चीस हजार जनता का सैलाव पू. मुनिश्री के प्रवचन सुनने के लिए उमड़ पड़ा।

पू. मुनिश्री ने रामायण एवं गीता के पात्रों एवं प्रसंगों का जैनधर्म के अनुरूप अध्यात्म परक प्रतीकात्मक प्रवचन प्रस्तुत किया जिसे सुनकर गया नगर की जनता भाव विभोर एवं मुग्ध हो गयी। गया नगर के इतिहास में इसके पूर्व किसी भी संत के प्रवचन में इतनी भारी संख्या में जनता कभी नहीं उमड़ी, प्रवचन सुनने पुरुषों के अतिरिक्त भारी संख्या में महिलाएँ- स्कूली छात्र-छात्राएँ एवं सेना के जवान भी पहुँचे। पू. मुनिश्री ने प्रसंगवशात् व्यसनमुक्ति एवं धर्म की उपादेयता पर भी अत्यन्त प्रभावी प्रवचन किया। पू. मुनि श्री के इन प्रवचनों से गया नगर की जनता पर जैनधर्म एवं दिगम्बर जैनसंत की प्रभावना की अमिट छाप पड़ी है। पू. मुनि श्री की रोचक एवं धारा प्रवाह प्रवचन शैली एवं दिगम्बरत्व की कठिन चर्या गया नगर में आम चर्चा का विषय बन गई है। स्थानीय नागरिकों ने पू. मुनिश्री की तुलना साक्षात् परमात्मा से करते हुए अपनी श्रद्धा व्यक्त की। मुनिश्री के दर्शन एवं चरण-स्पर्श हेतु भारी संख्या में जनता उमड़ पड़ी।

दिनांक 19 अक्टूबर 08 को कार्यक्रम समापन का मुख्य आतिथ्य करते हुए बिहार सरकार के लोक स्वास्थ्य एवं अभियंत्रणा मंत्री श्री अश्विनी चौबे ने पू. मुनिश्री के प्रति बिहार प्रान्त की जनता एवं बिहार सरकार की ओर से कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए राजकीय सम्मान अर्पित किया एवं विश्वधर्म-जागरण-मंच द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम के आयोजन की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि पू. मुनि श्री प्रमाण सागर जी महाराज के प्रभावी प्रवचन मानवीय चेतना के रूपान्तरण एवं विश्वशान्ति को साकार करने मे परम सहायक हैं। उन्होंने कहा कि पू. मुनिश्री के प्रवचन मगध की इस धरती पर हुए भगवान् महावीर की देशना का जीवन्त प्रतिबिम्ब हैं।

विमल कुमार सेठी, गया

गुणस्थान विषयक राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी सम्पन्न

गया (बिहार) दिनांक १२.१०.२००८ संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के सुयोग्य शिष्य मुनि श्री प्रमाण सागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में दिगम्बर जैनसमाज, गया (बिहार) की ओर से दिनांक 10 से 12 अक्टूबर 2008 तक आयोजित त्रिदिवसीय 'जैन तत्त्व विद्या और गुणस्थान' विषयक राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी अनेक उपलब्धियों के साथ सम्पन्न हुई।

प्रस्तुत संगोष्ठी में करणानुयोग के गूढ़तम विषय 'गुणस्थान' के विभिन्न पक्षों पर देश के प्रतिष्ठित तीस विद्वानों ने अपने शोध आलेखों के माध्यम से जो विवेचना प्रस्तुत की उससे उपस्थित हजारों नेताओं ने लाभ उठाया और गुणस्थानों के रहस्य को समझा। यह ज्ञातव्य है कि पूज्य मुनि श्री प्रमाण सागर जी ने चातुर्मास के मध्य नियमित कक्षाओं के माध्यम से जैनतत्त्व विद्या के विभिन्न विषयों के साथ ही गुणस्थानों के स्वरूप की व्याख्या सरलतम रूप में पहले ही समझाई है। प्रस्तुत संगोष्ठी से जिज्ञासुओं को गुणस्थानों की शास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक दृष्टि से विवेचना समझने में काफी लाभ प्राप्त हुआ।

त्रिदिवसीय संगोष्ठी के विभिन्न विषयों पर सम्पन्न आठ सत्रों में अट्ठाईस शोध आलेख विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किए गए। इस संगोष्ठी की विशेषता यह रही कि प्रत्येक विद्वानों को गुणस्थान पर उनके विषयों के शीर्षक के साथ ही उनके बिन्दु भी निर्धारित कर दिए गए थे। प्रत्येक सत्र के अन्त में पूज्य मुनिश्री ने अपने मांगलिक उद्बोधन के द्वारा प्रत्येक शोधालेख की जो समीक्षा प्रस्तुत की उससे जिज्ञासु श्रोताओं एवं विद्वानों को भी अत्यधिक लाभ एवं अनेक नूतन दृष्टियाँ प्राप्त हुईं।

यह ज्ञातव्य है कि शाश्वत तीर्थराज सम्मेद शिखरजी में निर्मित हो रहे इन्हीं गुणस्थानों के रहस्य को सहज और सजीव रूप में समझने और इससे आत्मिक विकास करने की दृष्टि से विशाल एवं भव्य रूप में निर्मित हो रहे 'गुणायतन' की सार्थकता और आवश्यकता से भी समाज सुपरचित हुई। इस 'गुणायतन' में आधुनिक तकनीकि एवं वैज्ञानिक संशाधनों के माध्यम से गुणस्थानों को सरलता से समझने में काफी लाभ प्राप्त होगा। साथ ही सभी ने यह आवश्यकता भी महसूस की कि गुणस्थानों के अनेक अनछुए पक्षों पर शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक विवेचना हेतु विशाल स्तर पर विविध विद्याओं के विद्वानों की ऐसी अनेक संगोष्ठियों का आयोजन आवश्यक है।

प्रस्तुत संगोष्ठी के विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पं० श्री मूलचन्द्र जी लुहाड़िया, डॉ. रमेशचन्द जैन, प्राचार्य निहाल चन्द्र जैन, प्रो० ऋषभ प्रसाद जैन, डॉ० शीतल चन्द जी जैन, डॉ० शेखर चन्द जैन प्राचार्य, अभय कुमार जैन एवं जैन गजट के यशस्वी सम्पादक श्री कपूर चन्द जी पाटनी ने की। विभिन्न सत्रों का सफल संयोजन कार्य प्रो. फूलचन्द्र जैन प्रेमी, पं० सिद्धार्थ कुमार जैन, पं० महेश जैन, डॉ० सुरेन्द्र भारती, ब्र० धर्मेन्द्र जैन, डॉ० अशोक कुमार जैन, श्री अनूप चन्द्र जी, एवं ब्र० राकेश भैया ने किया।

संगोष्ठी के विभिन्न सत्रों में इन विद्वानों के साथ ही ब्र० जिनेश भैया, डॉ० श्रेयांस सिंघई, प्रो० के. निलिन शास्त्री, प्रो. सुदीप जैन, ब्र. संजीव भैया, डॉ. कमलेश कुमार जैन जयपुर, ब्र. बहिन सुचिता जैन, डॉ. कमलेश कुमार जैन वाराणसी, पं० पंकज जैन, ब्र. अन्नु भैया, श्रीमती डॉ. मुन्नी पुष्पा जैन, विकास जैन ने अपने शोधालेख प्रस्तुत किए। संगोष्ठी का संयोजन कार्य ब्र. राकेश जैन एवं प्रो. फूल चन्द्र जैन ने सफलता के साथ किया।

देवेन्द्र कुमार जैन अजमेरा, गया

आंध्रप्रदेश श्रीसेवायन समन्वय समिति, हैदराबाद

हाल ही में हैदराबाद स्थित राजधानी होटल के सभागृह में श्रीसेवायतन के अध्यक्ष श्री एम० पी० अजमेरा की अध्यक्षता में आन्ध्रप्रदेश श्री सेवायतन समन्वय समिति की बैठक सम्पन्न हुई। बैठक में सर्वप्रथम श्री सेवायतन के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री एम० पी० अजमेरा ने श्री सेवायतन द्वारा ग्रामीण विकास एवं मानवसेवा के हितार्थ अनेकानेक कार्य, जो श्री सम्मेद शिखरजी मधुबन पंचायत के 14 ग्रामों में किए गए हैं अथवा किए जा रहे हैं, उनके संबंध में सभी सदस्यों को जानकारी दी। श्री सेवायतन की प्रदेश इकाई के गठन की आवश्यकता की विस्तृत जानकारी दी। प्रदेश ईकाई के अध्यक्ष श्री सुनील पहाड़े ने राज्य इकाई के सभी सदस्यों से अनुरोध किया कि अपने पावन पवित्र-तीर्थ श्री सम्मेद शिखर जीके आसपास बसे 14 ग्रामों के विकास के लिए हमें अपने दायित्वों को पूरी निष्ठा के साथ पूरा करना है तथा समाज के सभी लोगों का सहयोग लेना है। विचार विमर्शोपरान्त निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए गए-

प्रस्ताव 1- निर्णय लिया गया कि आंध्रप्रदेश से कम से कम 151 गायों की व्यवस्था इन 14 ग्रामों के ग्रामीणों के लिये की जाय, ताकि पारसनाथ क्षेत्र के लोगों के जीवन में खुशहाली आवे एवं उनकी आमदनी बढ़े ताकि वे लोग अपना जीवन स्तर बढ़ा सकें।

प्रस्ताव 2- श्रीसेवायतन के निर्माणाधीन भवन में कम से कम 8 कमरे आंध्रप्रदेश से बनाने का निर्णय लिया गया एक तल्ले में आठ कमरे ही हैं। अतः इस तले का नामकरण 'हैदराबाद ब्लॉक' रखा जाएगा। इसके निर्माण के लिए श्री मानिकचन्द चौधरी, श्री एस० पी० जैन, श्री राकेश जैन, श्री आनन्दीलाल बाकलीवाल एवं श्री उल्लासचन्द्र बाकलीवाल ने एक एक कमरे की स्वीकृति प्रदत्त की है जिसके लिए यह समिति उनको धन्यवाद ज्ञापति करती है। अन्य 3 कमरों की व्यवस्था की जा रही है।

प्रस्ताव 3- श्री सम्मेद शिखर जी क्षेत्र में अवस्थित 14 ग्रामों में से कम से कम 20 होनहार छात्रों का चयन कर उनकी सम्पूर्ण शिक्षा एवं पूर्ण व्यवस्था की जिम्मेदारी श्री सेवायतन लेगी एवं आंध्रप्रदेश समिति सहयोग करेगी। छात्रों के चयन के लिए श्री एम० पी० अजमेरा-श्रीसेवायतन के माननीय अध्यक्ष से अनुरोध किया गया।

प्रस्ताव 4- आंध्रप्रदेश राज्य इकाई की महिला प्रमुख श्रीमती कांता पहाड़े ने कहा कि शीध्र ही सम्मेद शिखरजी की यात्रा करने का कार्यक्रम बनाया जाएगा एवं 14 ग्रामों का भ्रमण कर मानवसेवा में योगदान दिया जाएगा एवं महिला मण्डल इस सेवा कार्य के कार्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

प्रस्ताव 5- बैठक में सभी सदस्यों ने प्रतिज्ञान लिया कि हम सब मिलकर विश्व विख्यात् तीर्थ स्थल क्षेत्र की पवित्रता बनाए रखने के लिए तथा 14 ग्रामों में रहनेवाले ग्रामीणों को सात्त्विक एवं आत्मनिर्भर करने के लिए हर संभव प्रयास करेंगे।

प्रस्ताव 6- निर्णय लिया गया कि समन्वय समिति के प्रदेश अध्यक्ष सुनील पहाड़े एक पत्र लिखकर समाज के सभी महानुभावों को अनुरोध पत्र भेजें कि मांगलिक अवसरों पर, यथा जन्मदिन, शादी अन्य अवसरों पर एक जन्म दिन, शादी या स्वर्ण, रजत जयंती एवं अन्य अवसरों पर श्रीसेवायतन संस्थान के लिए दान की राशि अवश्य घोषित करें।

सुनील पहाड़े
आन्ध्रप्रदेश श्रीसेवायतन समन्वय समिति
हैदराबाद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि श्री क्षमासागर जी की कविताएँ

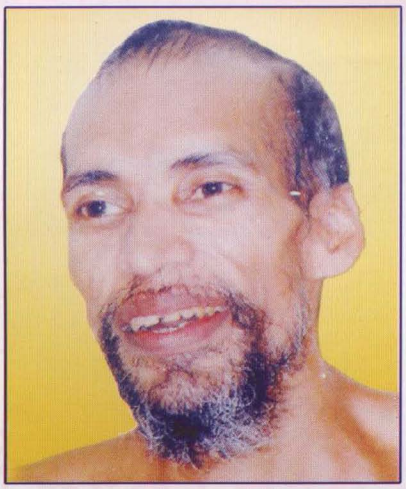

अन्तर

ये मन्दिर
इसलिए कि हम
आ सकें
बाहर से
अपने में भीतर
ये मूर्तियाँ
अनुपम सुन्दर
इसलिए कि हम
पा सकें
कोई रूप
अपने में अनुत्तर
और
श्रद्धा से झुक कर
गलाते जाएँ
अपना मान-मद
पर्त-दर-पर्त निरन्तर
ताकि
कम होता जाए
हमारे
और प्रभु के
बीच का अन्तर।

रोज हम

ये दीप धूप
ये गंध
मानो कह रही है
हमारा ही है यह
आत्म-सौरभ-अगंध
ये गीत-गान
वन्दना के छन्द
मानो कह रहे हैं
हमारा ही है यह
आत्म-गान अमन्द
ये प्रतिमा
अपलक निष्पन्द
मानो कह रही है
हमारा ही है यह
आत्म-दर्शन अनन्त
रोज हम
इनके करीब आयें
और इन्हें
अपने-में पायें
पुलक उठें
मनः प्राण।

'पगडंडी सूरज तक' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

UPHIN/2006/16750

मुनि श्री योगसागर जी की कविताएँ

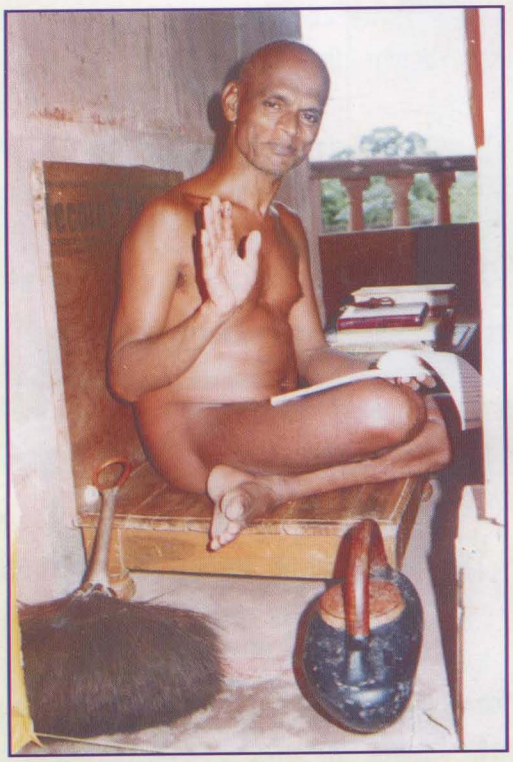

राई बराबर बुराई

राई बराबर
बुराई में
ऐसी गहराई है
जिसकी
तराई से
अमराई सी
छा जाती है

सद्भावना की शुभ्र रश्मियाँ

सन्त पुरुषों के
अन्तस् जगत् में
जब
सद्भावना की
शुद्ध शुभ्र रश्मियाँ
प्रस्फुटित होती हैं,
तब यही
बहिर् जगत् में
धर्म प्रभावना की
धवल ज्योत्स्ना
के रूप में
शरद पूनम की
चाँदनी सी छा जाती है,
जिससे भविक जनों की
हृदय की कुमुदनी
खिल जाती है
और
सम्यक्त्व की
पराग
बिखरती है

प्रस्तुति : रतनचन्द्र जैन

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, 210, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित। संपादक : रतनचन्द्र जैन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org